श्री सयाजी बाल ज्ञान माला—पुष्प १९ वां.

(चरित्र-गुच्छ)

श्री हर्ष

अनुवादक

आनन्दप्रिय आत्मारामजी बी. ए. एलएल बी.

औरंगजेब, बालस्वभाव और बालपालन के अनुवादक



प्रकाशक.

जयदेवब्रदर्स बड़ोदा



Printed at the Lakshmi Vilas Press by K. G. Patel, Published by Anand Priya B. A LL B. Karelibag Baroda, 10-2-1922.

श्री.

विज्ञप्ति.

अपने देशी भाषा के साहित्य की उन्नति कराने के उत्तम उद्देश्य से **श्रीमंत महाराजा साहेब सर सयाजीराव गायकवाड़** सेनाखासखेल, समशेर बहादुर, पतितपावन जी. सी. एस. आई, जी. सी. आई. ई, ने कृपा पूर्वक दो लाख रुपया सुरक्षित रख दिया है, उसके व्याज में से जिन्होंने अनिवार्य शिक्षण पूर्णकर विद्यामार्ग प्राप्त किया है, ऐसे बालकों के लिये जो उपयोगी हो सके ऐसी सुगम सरल भाषा में लिखे गए विविध विषयों का लोक साहित्य रचाकर उसे " **श्री सयाजी बाल ज्ञान माला** " नामक ग्रंथावली द्वारा प्रकाशित कराने की योजना की गई है।

इस योजना के अनुसार श्रीयुत आनन्दप्रिय आत्मारामजी से 'श्री हर्ष' नामक यह पुस्तक अनुवाद कराई गई है, और इसे उक्त " **बाल ज्ञान माला** " के " चरित्र गुच्छ के पुष्प १९ के रूप में विद्याधिकारी की भाषांतर शाखा द्वारा नियमानुसार कराकर प्रकाशित किया जाता है।

ओ३म्

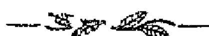
श्री हर्ष

विषय सूची अनुक्रमणिका पृष्ठ

परिशिष्ट

ओ३म्

अनुवादक की भूमिका



भारत के प्राचीन इतिहास की सामग्री किस प्रकार संस्कृत साहित्य में भरी पड़ी है यह बात इस उत्तम लघु पुस्तक के पढ़ने से जनता को भली प्रकार मालूम हो सकती है।

बाणभट्ट के श्री हर्ष काव्य के अतिरिक्त ग्रन्थ कर्ता श्री भरतराम भानुसुखराम महेता ने ह्युयेनत्सङ्ग तथा अन्य अनुसंधान प्रेमी लेखकों से सहायता लेकर जो जो नई बातें इतिहास सम्बन्धी दर्शाई हैं वह बहुत उपयोगी हैं।

आजकल इतिहास का विषय सर्व साधारण जनता के लिये सर्वत्र रूखा और फीका हो जाता है यह बात निर्विवाद है। संभव है कि प्राचीन काल के विद्वानो ने इस दोष की निवृत्ति के लिये उसको कविता के रसमय रूप मे लिखना उचित समझा हो। रामायण, महाभारत के अतिरिक्त सर्व काव्य ग्रन्थ इतिहास की सामग्री से भरपूर है यह बात प्रत्यक्ष ही है। कई कारणों से हमे अपना सच्चा इतिहास नहीं मालूम हो सका। अभी हमारे इतिहासकार सब विदेशी है उन लोगों ने हमारे इतिहास खोजने में बहुत श्रम किया है जिसका श्रेय उन्हें

मिल रहा है, परन्तु इन इतिहासों में एक भारी त्रुटि यह रह जाती है कि उनकी दृष्टि और भारतीय दृष्टि मे अन्तर है जहां वह हमारी बातें समझ नही सकते वह उसे Superstitious अथवा कल्पित बातें कह कर टाल देते हैं। इस समय आवश्यकता है कि पढ़े लिखे भारतीय अपने इतिहास का अनुशीलन कर अपनी विद्या को यथार्थ करें।

इस समय यदि देश मे संस्कृत भाषा का अधिक प्रचार होने लगे तो संस्कृत साहित्य के मूल आधार पर भारत का आदिकाल से लेकर आज तक का शृंखलाबद्ध इतिहास तैय्यार करने के लिये अनेक विद्वान मिल सकते है। हमारे ग्रामों में सैकड़ो हस्तलिखित पत्र तथा पुस्तकें भरी पड़ी हैं परन्तु हम नवशिक्षित वर्ग इसे कूड़ाकर्कट समझते हैं परन्तु धन्य हैं विदेशी लोग जो सात समुद्र पार कर के ग्राम ग्राम घूम इन्हें इकट्ठाकर स्वदेश भेज देते है। यदि हम सच्चे जौहरी हैं तो इन की परख करना सिखेंगे किन्तु यदि हम भूले रहे, तो हमारी इतिहास सामग्री शनैः शनैः सब बाहर चली जायगी। **प्रत्येक स्वदेशाभिमानी का कर्तव्य है कि पुराने हस्तलिखित ग्रन्थों, पत्रों, वा लेखों की रक्षा करे तथा योग्यता प्राप्त कर उसे सम्पादित करे।**

प्रस्तुत पुस्तक के विचार पूर्वक पढ़ने से निम्नलिखित ऐतिहासिक बातें पाठक जान सकेंगे—

(१) श्री हर्ष का राज्य हिमालय से नर्मदा तक था

(२) आधीन राजाओं के साथ उदार राजनीति का वर्तांव किया जाता था—

(३) चीन के साथ उसकी मित्रता थी।

(४) उस समय भारत में उच्च कुल की विधवाओं के पुनर्विवाह होते थे।

(५) स्त्रियों में परदे की दुष्प्रथा नहीं थी।

(६) जन्म से वर्ण नहीं थे किन्तु गुणकर्म से।

(७) आर्य्य भोजन अर्थात् मांस मदिरा से रहित भोजन का प्रचार था।

(८) विद्या का बहुत प्रचार था।

(९) रोगी सेवा आदि के लिये पूर्ण प्रबन्ध था।

(१०) दान की शुभ प्रथा थी।

(११) नगरों तथा मनुष्यों के नाम संस्कृत भाषा के शब्दों द्वारा रखे जाते थे।

(१२) हिन्दु प्रजा का नाम आर्य्य प्रजा था।

(१३) इस समय बौद्ध धर्म आर्य्य धर्म से भिन्न न था, जैसा कि इस पुस्तक के पाठ से स्वयं विदित हो जायगा।

(१४) एकही परिवार में पिता यदि शैव मत का था तो पुत्र बौद्धमत का, माता सूर्यकी उपासक तो पुत्री वैष्णव—इस प्रकार उनमें धार्मिक सहिष्णुता अमेरिका देश समान ही थी

कई लोगोंका ऐसा आक्षेप रहता है कि बौद्ध धर्म के तत्व वेदो में नहीं पाये जाते इसके उत्तर में हमारा निवेदन है कि निस्सन्देह पाये जाते हैं जैसे—

बौद्ध धर्म का प्रथम सूत्र वा नियम अंहिसा है। इस नियम का निम्न वेद मंत्रों मे समावेश हो जाता है —(१)... पशून पाहि यजु. अ; १ मं. १

(२) दृतेः... .मित्रस्याहं सर्वाणि भूतानी समीक्षे
मित्रस्य चक्षुषा समिक्षा महे— यजु अ ३६ मं १८
दूसरा नियम सत्य है इसकी पुष्टि में निम्न वेद मंत्र
है—अग्ने व्रतपते.... .सुपैमि य. अ. १ मंत्र ५
तीसरा नियम आस्तेय है — यह मा गृधा कस्य स्विद्धनम्
यजु अ. ४० मंत्र १ से पुष्ट होता है

चौथा नियम ब्रह्मचर्य है निम्न वेद मंत्र में इसकी समावेश होता है—ब्रह्मचर्य्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम् अथर्व. का. ११ मंत्र १८— ब्रह्मचर्य्येण तपसा देवा मृत्युमुपाघ्नत अथर्व. का. ११ मत्र १९.

पांचवा नियम अपरिग्रह है—इसकेलिये ' तेन त्यक्तेन भुंजीथा ' यजु. अ. ४० मं. १ है.

अतः यह सिद्ध हो सकता है कि बौद्ध नियम वेदमंत्रों से भिन्न नही परन्तु उनके अनुकूल ही हैं और बौद्ध धर्म वैदिक धर्म से उस समय भिन्न नहीं पर शाखारूप ही समझा जाता था

इस पुस्तक में एक स्थल पर ऐसा वर्णन आया है कि श्री हर्ष की माता को ऐसा स्वप्न आया कि तीन बालक उसके गर्भ में प्रविष्ट हुये, और स्वप्नानुसार उसने तीन ही बालकों को जन्म दिया। यह बात उसके मन की संकल्प शक्ति का बोधन कराती है। हमें याद होगा कि दृढ़ इच्छा शक्ति के कारण बाबर ने अपने ज्येष्ठ पुत्र हुमायुं की बीमारी हरली थी इसी प्रकार रानी के विचारों का प्रभाव उसकी भावी सन्तानों पर पड़ा। वह स्वप्न उसके मनके विचारों की प्रबलता बतलाता है और कुछ विशेष बात नहीं।

इसके उपरान्त एक दो स्थल पर शकुन और अपशकुन का वर्णन आता है। वास्तव में यह भी मन के शुभ अथवा अशुभ विचार हैं। इसी पुस्तक के एक उदाहरण से यह स्पष्ट हो जायगा। एक स्थलपर श्रीहर्ष को किसी ने स्वर्ण मुद्रा भेंट दी। लेते समय वह उसके हाथ से गिर पड़ी। आसपासके लोगों ने इसे अपशकुन समझा किन्तु हर्षने कहा कि जिस प्रकार इस मुद्रा का आकार कीचड़ पर पड़ा है उसी प्रकार मेरी सत्ता का प्रभाव सबपर पड़ेगा। इससे यह सिद्ध है कि शकुन अपशकुन कुछ नहीं केवल भिन्न भिन्न लोगों के मानसिक विचारों से इन्हे बुरा भला बना लिया गया है।

जरूरत है कि इतिहास प्रेमी पाठक इस बालोपयोगी पुस्तक को पढ़ें और अपने बालकों को पारितोषिक रूप में दें जिससे वह अपनी   में अपने राजाओं का गौरव पद

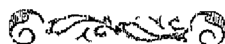
स्वदेशभिमानी बनें यह पुस्तक सयाजी बालज्ञानमाला में प्रकाशित हुआ है। इस माला के इसी प्रकार अन्य बालोपयोगी ग्रंथ तैय्यार हो रहे है। बालकों के हित चिन्तको को इस माला से लाभ उठाना चाहिये।

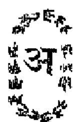
कारेलीबाग
बड़ोदा
१-८-२२

विनीत.
आनन्दप्रिय (अमृतसरी)
बी. ए एलएल. बी.

॥ ओ३म् ॥







पनी भारत भूमि का अति प्राचीन इतिहास बहुत ही रोचक तथा स्वदेशाभिमान कारक है, तिस पर भी हमारे प्राचीन इतिहासकारोंने जैसा चाहिये वैसा कोई भी इतिहास नही लिख रखा, और विशेष कर इ. स. पूर्व ६०० का इतिहास अभी तक वास्तव में अन्धकार में ही पड़ा हुआ है। इसवी सन पूर्व ७०० के पश्चात् का इतिहास भिन्न भिन्न साधनों द्वारा तय्यार हो सका है, परन्तु इस से यहां हमारा सम्बन्ध नही है। हमें यहां पर केवल यह याद रखना चाहिये कि इसवी सन ३२० में उन्नति के शिखर पर आरूढ़ गुप्त वंश इ स ५२८ में राजा कुमार गुप्त द्वितीय की मृत्यु पर

सत्ताहीन हो गया, और तब इस के छिन्नभिन्न वंशज भारत के कई अलग अलग स्थलों पर राज्य करने लगे। गुप्त वंशी राजाओं के अन्तिम काल में हूण जाति द्वारा भारत पर आक्रमण हुआ, तब मालवा के राजा यशोधर्म तथा मगध के बलादित्य ने मिलकर उन्हें मार भगाया। इस के पश्चात् गुप्त वंश के राज्य विस्तार में अनेक नवीन राज्य प्रख्यात हुए। इनमें श्रीकण्ठ अन्तर्गत स्थाणीश्वर (थानेश्वर) के वर्धन और कान्यकुब्ज (कन्नौज) के मौखरि मुख्य थे। इन्हों ने भी हूण लोगों के हराने में भाग लिया था।

हर्ष के पूर्वज

कन्नौज के वर्धन वंशीओं में से पुष्प भूति नामक राजा हमारे चरित्र नायक श्री हर्ष वर्धन का बहुत दूर का पूर्वज था, ऐसा उस समय के कवि बाण ने अपने रचित ' हर्ष चरित ' में लिखा है। मधुबन तथा बंसखेर के प्राप्त ताम्र पत्रों * पर से निम्न लिखित वंशावली तय्यार हो सकती है

नरवर्धन—वज्रिणी देवी
|
राज्यवर्धन—अप्सरादेवी
|
आदित्यवर्धन—महासेन गुप्ता
|
प्रभाकरवर्धन—यशोमति
|
राज्यवर्धन | हर्षवर्धन | राज्यश्री

बाण का कथन है कि इस वंश के राजा थाणेश्वर में राज्य करते थे। परन्तु इ० स० ६२१ से ६४२ के अन्दर भारत भ्रमण करने वाला प्रसिद्ध चीनी यात्री हयुएनत्सङ्ग लगभग इ० स० ६४२ में हर्ष को मिला था। उस समय हर्ष के विस्तृत साम्राज्य के अनेक मुख्य नगरों में से कन्नौज भी एक मुख्य नगर था। इस पर से उसने कन्नौज को ही इस वंश के राजाओं की राजधानी बतलाई है, परन्तु वास्तव में इस वंश के राजाओं की राजधानी थानेश्वर ही थी

पुष्प भूति

इस वंश के नरवर्धन, राज्यवर्धन तथा आदित्य-वर्धन इत्यादि राजाओं का इतिहास अभी तक प्राप्त नहीं हुआ किन्तु बाण कविने पुष्प भूति का थोड़ा बहुत इतिहास दिया है। वह शैव सम्प्रदाय का राजा था। दाक्षिण के साधु भैरवाचार्य से उसकी भेट हुईथी। इस साधुने अपने ब्राह्मण शिष्य पाताल स्वामी द्वारा ब्रह्मराक्षस से प्राप्त अट्टहास नामी बड़ी तलवार पुष्पभूति को दी। एक समय भैरवाचार्य ने महाकाल हृदय नामक महामंत्र के प्रताप से अट्टहास तलवार द्वारा भूत को वध करनेका पुष्पभूति से निवेदन किया और टीटिभ, पातालस्वामी तथा कर्णताल नामक तीन मनुष्यों को सहायतार्थ भेजनेका वचन दिया। वह अपनी अट्टहास तलवार को लेकर निश्चित स्थान पर गया और भैरवाचार्य ने मंत्रों का पाठ किया, इस पर से नाग श्रीकण्ठ (जिस के नाम से श्री कण्ठ देश कहा जाता है) प्रगट हुआ। पुष्प भूति ने उसे हाथ से ही पटक दिया, और ज्यूंही वह उस पर तलवार से घाव करने को था त्यूंही उसकी तलवार तथा नाग

के बीच में एक सुन्दर रमणी दृष्टि गोचर हुई। पुष्प भूति के पराक्रम से प्रसन्न होकर उसने मुंह मांगा वर मांगने को कहा। राजा ने अपने लिये न मांगते हुए भैरवाचार्य की जय चाही। रमणी बोली "तथास्तु, तथा उसकी इस मानसिक उदारता एवं शिव की प्रगाढ़ भक्ति के बदले उसे सूर्य्य चन्द्र सम तीसरा प्रतापी पुरुष होने का, तथा बड़ा वंश चलाने का वर दिया। इस वंश के राजे पृथ्वी पर अपना अधिकार करेंगे तथा बहुत प्रख्यात होंगे। शुचि, सौभाग्य, सत्य, त्याग, धैर्य्यादि गुणों के कारण वह वीर पुरुष कहलायेंगे। इस वंश में सब द्वीपों का अधिपति, हरिश्चन्द्र सम चक्रवर्ती तथा मान्धाता समान त्रिभुवन विजयी श्री हर्ष नामक राजा होगा और कमल चिन्ह युक्त यही हाथ उस के छत्र को पकड़ेगा" इतना कह वह अन्तर्धान हो गई। भैरवाचार्य्य भी पुष्पभूति को प्रणाम कर आकाश की ओर लीन हो गया। श्री कण्ठ यह कह कर कि काम पड़े पर बुला लेना धरती में समा गया। पुष्पभूति भी टीटिभ पाताल स्वामी और कर्ण ताल को लेकर अपने घर आया टीटिभ कुछ कालानन्तर चला

गया और दूसरे दोनों पुरुषोंने राजा की नौकरी करली, बाण कविने पुष्पभूति का इतना ही इतिहास दिया है।

प्रभाकर वर्धन

इस के पश्चात् इस वंश में अनेक राजा हुए परन्तु उनका इतिहास अभी तक प्राप्त नहीं हुवा। इ. स. ६०५ में जब प्रभाकर वर्धन गद्दी पर बैठा तब से फिर बाण ने इस वंशका इतिहास दिया है। प्रभाकर वर्धन को "प्रतापशील" भी कहा जाता था। पंजाब के गान्धार (पेशावर) और साकल (स्यालकोट) में राज्य करने वाले हूण लोगों को उसने हराया था। सिन्ध के राजा तथा राजपूताना के गुर्जर राजा को भी उसने पराजित किया। मालवा तथा लाट (भरुच) के राजाओं पर भी उसने विजय प्राप्त की *

उसकी पत्नी का नाम यशोवति (यशोमति) था। एक समय जब राजा तथा रानी सो रहे थे तब

---

* हूणहरिणकेसरी सिन्धुराजज्वरो गुर्जरप्रजागरो गान्धाराधिपगन्धद्विपकूटपाकलो लाटपाटलपाटच्चरो मालव लक्ष्मीलता परशु हर्ष चरित)

रानी ने यह विचित्र स्वप्न देखा, कि दो युवक तथा एक युवती उसका पेट चीर कर अन्दर आ रहे हैं; इससे वह चौंक उठी और चिल्लायी। यह स्वप्न यथार्थ निकला कुछ कालानन्तर यशोवति ने राज्य वर्धन को जन्म दिया इस के तीन वर्ष पश्चात् श्रावण मास में यशोवति गर्भवती हुई और यथा समय उसने श्रीहर्ष को जन्म दिया। इस के दो वर्ष पश्चात् राज्यश्री नामक कन्या उत्पन्न हुई। इस समय यशोमति के भाई ने अपना आठ बरसका लड़का भण्डी राज कुमारों के सहवास में रखा। प्रभाकर वर्धन ने मालवा के गुप्त राजा के कुमार गुप्त और माधवगुप्त नामक राज कुमारों को भी अपने दोनों राजपुत्रों के साथ रखा. इस प्रकार यह चारों कुमार साथ रहने लगे। राजश्री भी दिनों दिन बढ़ने लगी। एक दिन प्रभाकर वर्धन ने निम्न लिखित ' आर्य्या श्लोक ' किसी को गाते सुना

उद्वेगमहावर्ते पातयति पयोधरोन्नमन काले।

सरिदिव तटमनुवर्षं विवर्धमाना सुता पितरम

अपने घेर में ले लेती है उसी प्रकार दिन प्रति दिन बढ़ने वाली लड़की पयोधरों के उन्नमन काल में अपने पिता को चिन्ता रूपी चक्र में डाल देती है।

इस को सुन प्रभाकर वर्धन ने अपनी कन्याका विवाह करने का निश्चय किया, और कन्नौज के मौखरि वंश के अवन्तिवर्मा नामक राजा के ज्येष्ठ पुत्र ग्रहवर्मा से धूम धाम पूर्वक विवाह करादिया। यहां हमें मौखरि वंश के इतिहास पर भी विचार करना होगा।

अशीरगढ़ से जो मुद्रा प्राप्त हुई है उसपर शर्ववर्मा का लेख है, उसमें कन्नौज के मौखरि वंश के राजाओं की वंशावली दी हुई है। वह इस प्रकार है

(१) महाराजा हरिवर्मा (२) महाराजा आदित्यवर्मा
(३) महाराजा ईश्वरवर्मा (हर्षगुप्ता का पुत्र)
(४) महाराजाधिराज ईशानवर्मा (उपगुप्ता का पुत्र)
(५) परम महेश्वर महाराजाधिराज शर्ववर्मा मौखरि

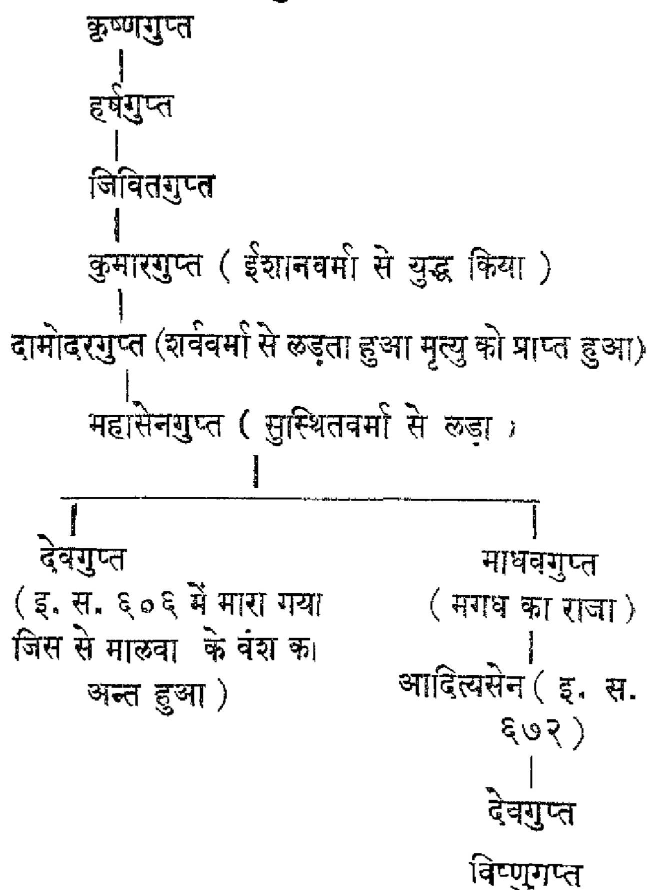
यह सूचि यहीं समाप्त नहीं होती। गुप्तवंशी राजाओंके अफसद के शिलालेख में सुस्थितवर्मा का नाम है, वह छठा राजा था ' वराणिका (देव बर्नक) के शिलालेख

में अवन्तिवर्मा का नाम है, वह सातवां राजा था इस राजा के ही पुत्र ग्रहवर्मा के साथ राज्यश्री का विवाह हुआ था। इन शिलालेखों के आधार पर मौखरि और गुप्त वंशी राजाओं की निम्न लिखित वंशावली तय्यार की जा सकती है।

मौखरि वंश

हरिवर्मा
|
आदित्यवर्मा (हर्षगुप्ता के साथ विवाह हुआ)
|
ईश्वरवर्मा (उपगुप्ता के साथ विवाह हुआ
|
ईशानवर्मा
|
शर्ववर्मा
|
सुस्थितवर्मा
|
अवन्तिवर्मा

गुप्त वंश.


कृष्णगुप्त
हर्षगुप्त
जिवितगुप्त
कुमारगुप्त (ईशानवर्मा से युद्ध किया)
दामोदरगुप्त (शर्ववर्मा से लड़ता हुआ मृत्यु को प्राप्त हुआ)
महासेनगुप्त (सुस्थितवर्मा से लड़ा)
देवगुप्त
(इ. स. ६०६ में मारा गया
जिस से मालवा के वंश का
अन्त हुआ)
माधवगुप्त
(मगध का राजा)
आदित्यसेन (इ. स.
६७२)
देवगुप्त
विष्णुगप्त

. मालवा के गुप्त तथा कन्नौज के मौखरि वंशी राजाओं में पहिले से ही आपस में लड़ाईयां चलती थी, ऐसा अफसद के शिला लेख से प्रकट होता है। इसकी पुष्टि बाण के " तिमिरैस्तिरस्कारो रवेः यो मौखराणा मालवैः परिभवः " इत्यादि वाक्य से भी होती है। आदित्यवर्मा की स्त्री हर्षगुप्ता उस के सम कालीन हर्षगुप्त की बहिन होगी। उपगुप्ता का परिचय देना कठिन है। मौखरि वंश के राजे ईशानवर्मा के समय से ही ऐश्वर्य्यवान हुए होगें, क्यों कि इस राजा-को महाराजाधिराज की उपमा दी गई है। ईशानवर्मा के पूर्व के तीन राजाओं को केवल महाराजा ही कहा गया है। मौखरि नाम केवल शर्ववर्मा के साथ लगाया गया है। मौखरि लोग उत्तर हिंदुस्तान के मुख्य क्षत्रिय थे ऐसा बाण के " सत्स्वप्यन्येषु वरगुणेषु अभिजनमेवाभि-रुध्यन्ते धीमन्तः। धरणीधराणांच भूभृन्मूर्ध्निस्थितो सकल भुवननमस्कृतो मौखरी वंशः ॥ " इत्यादि वाक्य से प्रकट होता है शर्ववर्माने हूण लोगों को हराया

था* उसका राज्य दक्षिण में विन्ध्या पर्वत से परे असीर गढ़ तक, तथा पूर्व में लौहित्य (ब्रह्मपुत्र) तक विस्तार पा चुका था।

अवन्ति वर्मा नामक मौखरि राजा के कई शिला-लेख प्राप्त हुए हैं उन पर यहां विचार करना आवश्यक है। इन में यज्ञवर्मा, शार्दूल वर्मा और अनन्त वर्मा यह तीन ही नाम दीखते हैं। यह राजा अपने आप को मौखरिप्रसिद्ध किया करते थे, इससे प्रकट हुआ कि उनका वंश इस मुख्य वंश का शाखारूप होगा। इन के एक शिला लेख में " श्री शार्दूल इति प्रतिष्ठित यशः सामन्त चूड़ा मणिः ऐसा वाक्य है। इस लेख पर से ऐसा कहा जा सकता है कि वह सामन्त नाम से प्रसिद्ध थे। शर्ववर्मा और ईशानवर्मा तो महाराजाधिराज कहलाते थे। यह शाखा वंश गया में स्थापित हुआ होगा कारण कि वहां से यह शिला लेख प्राप्त हुए हैं।

---

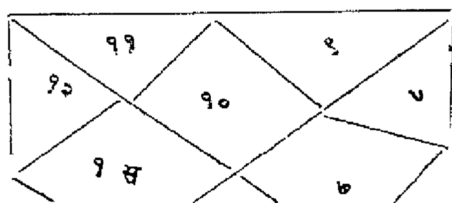
* अफसद के शिलालेख मे " यो मौखरे: समितिषूद्धत-हूर्णसैन्यावल्गद्धटा विघटयन्नुरु रणानाम् ॥ इत्यादि लिखा है इस पर से यह प्रकट होता है कि मौखरि और हूण लोगों मे आपस में अनबन होगी

अयोध्या के फैज़ाबाद ज़िले के भितारी गांव के मौखरि वंशीओं के कई सिक्के प्राप्त हुए हैं। इन सिक्कों पर ईशानवर्मा शर्ववर्मा और अवन्तिवर्मा; तथा हर्ष, प्रतापशील, शिलादित्य आदि राजाओं के नाम है। इस परसे ऐसा कहा जा सकता है कि गंगा तट के ऊपर के भाग पर गुप्त राजाओं के राज्य के पश्चात् मौखरि राजाओं का राज्य स्थापित हो गया था।

हर्ष का जन्म काल

मौखरिवंश का इतना परिचय दे चुकने पर अब हम हर्ष के जन्म काल पर विचार करेंगें उसकी जन्म तिथि किसी शिलालेख अथवा बाण कवि के हर्ष चरित्र में भी नहीं दी हुई। परन्तु बाणने "ततश्च प्राप्ते ज्येष्ठा मूलीये मासि बहुलासु बहुलपक्षद्वादश्यां व्यतीते प्रदोष समये समारुरुक्षति क्षपायैावने सहसैवान्तःपुरे समुदपादि कोलाहलः स्त्री जनस्य" हर्ष चरित में ऐसा लिखा है। इससे हम हर्ष की जन्म तिथि निश्चित कर सकते हैं। बाण के लेखानुसार हर्ष ज्येष्ठ वदी बारह की रात के दस बजे के लगभग चन्द्र कृतिका नक्षत्र में उत्पन्न हुवा था.[1] विक्टोरिया कालेज लश्कर (ग्वालियर) के प्रोफे

सर आप्टेने इस पर से गिनती कर ऐसा परिणाम निकाला है कि इ. स. ५८९ तथा इ. स. ५९० की ज्येष्ठ बद बारह के कृतिका नक्षत्र में उसका जन्म हुवा था। परन्तु इ. स. ५८९ की ज्येष्ठ बदी बारह सूर्य्यास्त के पश्चात् हुई थी इस लिये हमारे उपयोग की नहीं हैं। इ. स. ५९० की ज्येष्ठ बद बारह सूर्य्योदय से आरम्भ हुई थी और ४० घड़ी तक रही थीं। उसदिन कृतिका नक्षत्र सूर्य्योदय के चार घण्टे के बादसे आरम्भ हुवाथा। श्री चिन्तामण वि. वैद्य ने गिन्ती कर हर्षका जन्म दिन रविवार ता. ४ जून इ. स. ५९० निश्चित किया है। बाण के लेख पर से अ. आप्टे महाशय ने हर्ष की जन्म कुण्डली निम्न प्रकार तैयार की है।



परन्तु इस पर शङ्का उत्पन्न होती है। बाण कवि "मान्धाता किलैवंविधे व्यतीपातादिसर्वदोषाभिषङ्ग रहितेऽहनि सर्वे पूच्चस्थानस्थितेष्वेवं ग्रहेष्वीदृशी लग्ने मेजे जन्मः" इत्यादि वाक्य में यह कहा है कि हर्ष के जन्मदिन सब ग्रह उच्च के थे। परन्तु ५८९ वा ५९० की ज्येष्ट बदी बारह के ग्रह उच्च के नहीं थे ऐसा प्रतीत होता है, कदाचित् यह हर्ष के राज कवि की अत्युक्ति हो ऐसा अनुमान होता है।

प्रभाकर वर्धन की मृत्यु

अब हम फिर अपनी मूल कथा के सूत्र को पकड़ेगें। राज्य श्री के विवाह के थोड़े दिन पश्चात् हूण लोगों ने थानेश्वर पर चढ़ाई की। यह देख प्रभाकर वर्धनने राज्य वर्धन तथा हर्ष को अपने पास बुलाया। उस समय राज्य वर्धन की आयु "हथियार चलाने लॉयक" अर्थात् लगभग बीस बरस की थी। प्रभाकरवर्धन ने दोनों को सेना तथा अन्य सामग्री दे हूण लोगों को हराने निमित्त भेजा। वह जब हिमालय पर्वत की तराई में पहुचें तो हर्ष की इच्छा वहांपर आमोद प्रमोद करने

की हुई। इतने में एक दिन प्रभात में हर्ष ने स्वप्न में एक सिंह को आग में जलते देखा तथा उसके पीछे सिंहनी को भी कूदते पाया। यह देखकर प्रेम पाश सम्बन्धि उसके मन में नाना प्रकार के विचार आने लगे तथा वह कुछ उदास हो गया। इसी समय उसने एक हिरण को आते देखा। उसके गले में एक जामुनी रङ्गका कुछ बन्धा हुवा था। इस अपशकुन को देख वह चिन्तित हुवा। उस हिरण ने अपने गले में बंधी हुई चिट्ठी उसे दी। उसे पढ़कर उसने हिरण से पूछा कि "मेरा पिता किस रोग से पीड़ित है"। हिरण ने उत्तर दिया कि उसे बहुत ज्वर आ रहा है यह सुन हर्ष बिना खाए पीए, अकेला ही घोडे पर सवार हो अपने घ॰ को चल दिया। दूसरे दिन दोहपर को जब प्रभाकर वर्धन से भेट हुई तब उसकी अवस्था अधिक शोचनीय देख पुनर्वसु के कुल के रसायन नामी वैद्य को बुलाया और 'पिताजी कब अच्छे होंगे' ऐसा पूछा। रसायन दूसरे दिन बतलाने की प्रतिज्ञा कर चला गया। अगले दिन हर्ष को रसायन के अग्नि प्रवेश का समाचार मिला। 'मेरे कुटुम्ब के लिये रसायन के शुद्ध प्रेम का यह परिणाम है' ऐसा सोच. कर

उसका हृदय द्रवीभूत होगया। इतने में पतिकी जीविता-वस्था में ही उसकी माता सती हो रही है, यह समाचार उसको आया। हर्ष ने यशोमति को बहुत समझाया परन्तु उसने किसी का न सुन पूर्व से ही सती होना स्वीकार किया कुछ दिन पश्चात् प्रभाकरवर्धन हर्ष को अच्छी शिक्षा दे स्वर्ग लोग को सिधार गया।

ग्रहवर्मा का वध

इधर राज्यवर्धन ने हूण लोगों को मार भगाया, और फिर वह थानेश्वर पंहुचा, वहां उसने अपने माता पिता की मृत्यु के समाचार जाने। अब वह गद्दी का मालिक हुआ परन्तु बौद्धधर्मी राज्यवर्धन ने अपने अधिकार हर्ष को दे देने का विचार किया, और स्वंय सन्यास धारण करने की ठानी। अभी यह बात पूर्णरूपसे भी निश्चित नहीं हुई थी कि इतने में राज्यश्री का संवादक नामी दूत यह समाचार लाया कि जिस दिन प्रभाकरवर्धन की मृत्यु की बात फैली थी, उसी दिन मालवा के राजाने ग्रहवर्मा का वध कर कन्नौज में राज्यश्री को कैद किया, और ऐसी किंवदन्ती है कि वह आपके राज्य पर भी चढाई

करने की इच्छा रखता है। बाण ने इस राजाका नाम नहीं बतलाया, परन्तु कई साधनों द्वारा इसका नाम निश्चित हो सकता है। हर्ष के मधुवन के शिला लेख में निम्नलिखित श्लोक पाया जाता है।

राजानो युधि दुष्टवाजिन इव श्री देवगुप्तादयः
कृत्वा येन कशाप्रहारविमुखाः सर्वे समं संयताः

इस पर से यह स्पष्ट है कि राज्यवर्धनने देवगुप्त जैसे राजाओं को हराया था। हम यह भी जानते हैं कि राज्यवर्धन ने अपने राज्य काल में केवल दो ही युद्ध किये थे, एक हूण लोगों के साथ और दूसरा मालवा के राजा के साथ। इस पर से यह सिद्ध हुआ, कि ग्रहवर्मा का वध करने वाला मालवा के राजा का नाम देवगुप्त ही था। डॉ० हर्लीका कथन है कि कदाचित् यह देवगुप्त, माधवगुप्त और कुमारगुप्त का बड़ा भाई हो। अभी हम लिख चुके हैं कि "मालवराजपुत्रौ" माधवगुप्त और कुमारगुप्त तो हर्ष के मित्र थे। अफसद की शिला लेख के "श्री हर्ष देव निज सङ्गमवांछयाच" से उक्त बात का समर्थन होता है। अब यह प्रश्न उपस्थित हो सकता हैं, कि जो भाई राजा

के परम मित्र थे, वह उसके बहनोई का क्यूं वध करेंगे? इसका स्पष्टीकरण इस प्रकार हो सकता है कि माधवगुप्त और कुमारगुप्त, देवगुप्त से छोटे तथा सौतेले भाई होंगे। आजकल भी सौतेले भाई प्रायः लड़ते रहते हैं तो उस समय भी कभी यही बात हो, और इसी कारण अभिमानी देवगुप्तने अपने छोटे भाइयों को अपने भाञ्जो अर्थात् प्रभाकरवर्मा के पुत्रों के पास भेज कर स्वयं मालवा का राजा बन बैठा होगा ऐसा समझना कठिन नहीं। प्रभाकरवर्धन की मृत्यु का समाचार सुन तथा राज्य वर्धन की अनुपस्थिति देख कर देवगुप्त ने ग्रहवर्मा पर चढ़ाई की होगी। उसकी पत्नी राज्यश्री को बन्दी बनाकर राज्यवर्धन पर भी हमला करने का विचार किया होगा। इस कार्य में उसने अपने मित्र कर्णसुवर्ण (मुर्शिदाबाद) के राजा शशाङ्क गुप्त से भी सहायता मांगी थी। कन्नौज के मौखरियों ने गुप्तवंश का राज्य मिटाकर ठीक ब्रह्मपुत्र तक अपना राज्य विस्तार किया था इस लिये मालवा के गुप्त वंशिओं के समान बङ्गाल के गुप्त वंशी भी मौखरियों से बदला लेने का विचार रखते होंगे ऐसी धारणा हो सकती है इसके अतिरिक्त

कन्नौज तथा थानेश्वर के राजा बौद्ध धर्मावलम्बी थे और पूर्व काल में तो धर्म भी राजाओं में वैमनस्य का कारण था। इसी हेतु शशाङ्कगुप्त ने सहायता देना स्वीकार किया होगा इसमें कोई अचरज नही।

राज्यवर्धनका वध

संवादक का समाचार सुन राज्य-वर्धन क्रोध युक्त हुआ और लढाई की तैयारी करने लगा। अपने साथ उसने १०००० घोड़े स्वार लिये तथा अपने मामा का पुत्र भण्डीको सेनापति बनाया। हर्ष ने साथ जाने का आग्रह किया किन्तु राज्य-वर्धन ने उसे समझा कर थानेश्वर में ही रहने को कहा। राज्यवर्धन ने देवगुप्त को हरा दिया तथा बहुत करके वह युद्धमें मारा गया। वहां से शत्रुओं क पंजे में से कन्नौजको छुड़ाने के लिय वह चल पड़ा। मार्ग में उसकी शशाङ्कगुप्त से भेट हो गई। शशाङ्कगुप्त ने राज्य-वर्धन की भारी सेना देख तथा अपनी निर्बलता पर विचार कर कपट करने का निश्चय किया, इस समय परस्पर झगड़ा मिटाने की जो युक्तियां अन्य क्षत्रिय राजा काम में लाते थे वही इसने भी की। शशाङ्क गुप्त ने अपने आप को राज्यवर्धन के आगे झुका

दिया तथा प्रायश्चित रूप में अपनी पुत्री का उससे विवाह कर देने का वचन दिया। विश्वासी राज्यवर्धन थोड़े पुरुषों को लेकर उसकी छावणी में प्रविष्ट हुआ। खाते समय शशाङ्कगुप्त ने राज्यवर्धन का वध कर झटपट अपने देश का रास्ता पकड़ा। इतने मैं कन्नौज के रहने वाले कोई गुप्त सरदारने मण्डी को भरमाने के हेतु राज्यश्री को मुक्त कर किसी अन्य स्थान पर भेज दिया।

इस समय हर्ष का वय कितना होगा, यह स्थिर करना चाहिये। बाण का कथन है, कि राज्यवर्धन तथा हर्ष में तीन वर्ष का, तथा हर्ष और राज्यश्री में दो वर्ष का अन्तर था। जब कुमारगुप्त और माधव गुप्त सङ्गी नियत हुए तब बाण के "अष्टादश वर्षवयसं" वाक्यानुसार कुमारगुप्त १८ वर्ष का था। इसके एक वर्ष बाद राज्यश्री का विवाह हुआ, तथा इसके एक वर्ष बाद, प्रभाकरवर्धन की मृत्यु हुई। यदि राज्यवर्धन और कुमारगुप्त को समानवयस्क मान लिया जाय तो इस समय राज्यवर्धन की आयु १९ वर्ष की होगी अर्थात् फिर हर्ष का वय १६ वर्ष का होना चाहिये

हर्ष अपने आप को राजा न कहला कर राजपुत्र शिलादित्य कहलाने लगा।

हर्ष की प्रवृत्ति

जब राज्यवर्धन देवगुप्त से लड़ने के निमित्त गया तब हर्ष को अनेक अपशकुन होने लगे, जिससे उसका मन चिन्तातुर हो गया। उसकी चिन्ता ठीक निकली तथा उसके भाई की सेना के कुन्तल नामी सरदार ने राज्यवर्धन के वध के समाचार हर्ष को सुनाये। यह सुन हर्ष विक्षिप्त हो गया। इस समय प्रभाकरवर्धन का मित्र, सेनापति सिंहनाद वहां था, उसने हर्ष को शान्त रहने का उपदेश दिया तथा राज्यव्यवस्था चलाने की सम्मति दी, किन्तु हर्ष ने इस पर कुछ भी ध्यान नहीं दिया। हर्ष एक साधारण पुरुष नहीं था, उसमें विशेष शक्ति एवं महान साहस था। वह भाग्यवान भी था। उसने संसारके समस्त राजाओं के पांव में बेड़ी पहिनाने की प्रतिज्ञा की, तथा अनुत्तीर्ण होने पर अपने आपको चिता के अर्पण करने का संकल्प किया। ऐसा विचार कर अपने युद्धमंत्री अवान्ति द्वारा दूर दूर देशों में ढंण्डोरा पिटवाया और स्वयं मालवा के देवदूत

का अन्त लाने का तथा अपनी भाग्यहीना बहिन राज्यश्री के उद्धार करने का निश्चय किया। केवल बंगाल को ही नहीं किन्तु समस्त भारतवर्ष के जीतने निमित्त हाथी घोड़े इत्यादियों का एक महासैन्य तैय्यार किया गया। ऐसा करने का यह कारण था कि हर्ष समझता था कि उसे अकेला तथा निस्सहाय समझ समस्त राजागण उसका सामना करने को तत्पर हो जायेगें। इस प्रकार दिग्विजय करने का निश्चय स्थिर हुआ। हाथियों की सेना के मुख्य महावत स्कन्दगुप्त को सब ठीकठाक करने का आदेश दिया गया। स्कन्दगुप्त ने दिग्विजय करने के विचार को अयुक्त बतलाया और अपने कथन की पुष्टि में नम्रता पूर्वक अनेक प्राचीन दृष्टान्त दिये, परन्तु हर्ष के ध्यान में एक बात भी नहीं समाई और उसने सब तैयारी करने का आदेश दिया जिसे पूर्ण करने के निमित्त वह चल पड़ा। इसी समय हर्ष को अनेक शुभ शकुन हुए जिससे उसे अपनी दिग्विजय का पूर्ण भरोसा होयगा

दिग्विजय के लिये कूच

इसके अनन्तर अनेक ज्योतिषियोंसे शुभ दिन मालूम कर कूच आरम्भ कर दी गई। सबसे पूर्व उसने थानेश्वर से थोड़ी दूर सरस्वती नदी के तटस्थ मन्दिर के पास अपना पड़ाव डाला। वहां का ग्राममुखिया उसके सत्कार के लिये आया और प्रथानुसार एक स्वर्ण मुद्रा भेंट की। यह स्वर्ण मुद्रा विशेष कर इसी अवसर के लिये ही ढलवाई गई थी। इस पर बैलकी आकृति थी। हर्ष जब इस मुद्रा को लेने लगा तब उसके हाथ से फिसल कर वह कीचड़ में मुखके बल गिर पड़ी और वहां बैल की आकृति पड़ गई। उपस्थित जनसमूह ने इसे अपशकुन समझा परन्तु हर्ष बोला "कि यह शकुन तो यह बतलाता है कि केवल मेरे आधिपत्य का ही प्रभाव सारी दुनिया पर पड़ेगा" हर्ष जैसे दूरदर्शी बलवान राजा को कोई विशेष उपदेश की आवश्यकता न होने पर भी उसके मंत्रियों ने उसे प्राचीन दृष्टान्तों द्वारा दुनिया के छल कपट इत्यादि से सावचेत रहने की अनुमति दी। इस उपदेश को वह ग्रहण कर दिग्विजय के लिये निकल पडा। प्रथम वह

सरस्वती के तीर पर आया और वहां के मुखिया के साथ आये हुए ब्राह्मणों को उसने १०० गांव इनाम में दिये।

प्राग ज्योतिष की ओर से हर्ष को भेंट

जिस समय हर्ष आगे बढ़ने की तैय्यारी में था उस समय प्राग ज्योतिष (आसाम) के राजकुमार की ओर से हंसवेग नामक एक विश्वास पात्र पुरुष मिलने को आया। उसने आभोग नामी एक अद्भुत छत्री तथा अन्य कई वस्तुओंकी भेंट दी तथा अपना सन्देश एकान्त में कहने की प्रार्थना की। एकान्त में उसने 'आभोग' का इतिहास बतलाया। पूर्वकाल में एक नरक नाम से प्रसिद्ध वीर पुरुष हुआ है, उसने वरूण से उसकी बाह्यहृदयरूपी यह छत्री प्राप्त की थी। इस नरक के वंश में भगदत्त, पुष्पदत्त और वज्रदत्त जैसे महान राजा हो गये हैं। इसी वंश में इन राजाओं के पश्चात सुस्थिरवर्मा नामक एक महाराजाधिराज हुआ है जो मृगाङ्क के नाम से प्रसिद्ध था। वह कैलास के महाराजा भूतिवर्मा के पुत्र चन्द्रमुखवर्मा के पुत्र स्थितिवर्मा का पुत्र था उसकी पत्नीका नाम श्यामा

देवी था। उसके गर्भ से उत्पन्न भास्करद्युति अथवा भास्कर बर्मा नामक युवराज ने यह आभोग छत्री हर्ष को भेंट निमित्त भेजी थी तथा उससे मित्रता की याचना की थी। हर्ष ने यह भेंट प्रसन्नता पूर्वक स्वीकार कर मित्रता का वचन दे हंसवेग को रवाना किया।

राज्यश्री की खोज

हर्ष जब कन्नौज की ओर कूच करने की तय्यारी में था उस समय भण्डी आ पंहुचा। उसके साथ मालवा के गुप्त राजा के सब हाथी, बन्दी मनुष्य तथा कीमती खजाना था। दोनो भाइयों ने अपने मृत भाई के लिये बहुत शोक किया तथा भण्डी ने राज्यवर्धन के बध का आदि से अन्त तक का सब वृतान्त कह सुनाया। तत्पश्चात् हर्ष ने भण्डीसे राज्यश्री के समाचार पूछे, भण्डी ने उत्तर दिया कि लोगों में तो ऐसा सुना जाता है, कि जब राज्यवर्धन मर गया और गुप्त राजा ने कन्नौज पर कब्ज़ा किया तब राज्य श्री ने अपनी सहेलियों सहित कैदखाने से भाग कर विन्ध्यापर्वतश्रेणि के जङ्गलों में आश्रय लिया हैं। उसकी खोज में गये हुए अनेक पुरुषो में से अभी तक कोई नहीं लौटा। यह

सुन हर्ष कहने लगा " कि ऐसे खोज करने वाले हमारे किस काम के है । राज्यश्री जहां गई होगी वहां मै सब काम छोड़ कर जाऊंगा और तुम सेना लेकर शशाङ्कगुप्त से लड़ने जाओ " तदनन्तर मालवा के गुप्त राजा से प्राप्त खजाने का प्रबन्ध कर वह विन्ध्यापर्वत की ओर चल दिया और थोड़े दिन में ही वहां पहुंच गया।

दिवाकरमित्रसे भेट

इस प्रकार वह बहुत दिन तक जङ्गल में भटकता रहा परन्तु राज्यश्री का कुच्छ भी पता नहीं लग सका। एक दिन शरभकेतु नामक सरदार का पुत्र व्याघ्रकेतु एक जङ्गली पुरुष को अपने साथ ले हर्ष के पास आया। महाराज को प्रणाम कर कहने लगा कि भगवन् शबरों का सर्दार भूकम्प इस विन्ध्या पर्वत के जङ्गलों का स्वामी और सब जङ्गली लोगोंका नायक है। यह निर्घात उसका भांजा है तथा यहां के सब स्थलों से परिचित है। आप इसको जो आज्ञा देगें वह उसे शीघ्र ही पालन करेगा। इस पर से हर्ष बोला कि यह सब प्रदेश तुम्हारा परिचित है तथा तुम घूमना भी

पसन्द करते हो, यह बहुत ठीक है परन्तु क्या तुमारे नायक अथवा उसके किसी अनुचर ने किसी स्त्री को जङ्गल में देखा है। निर्घात ने उत्तर दिया "महाराज आपकी आज्ञानुसार खोज हो रही है, यहां से एक कोसकी दूरी पर दिवाकरमित्र नामक ऋषि रहता है स्यात उसे इस सम्बन्ध में कुच्छ मालूम हो। यह सुन हर्ष को स्मरण हुआ, कि कदाचित् ग्रहवर्मा का एक बालस्नेही जो मैत्रयणि शाखा का था और जिसने वैदिक धर्म को छोड़ बौद्ध धर्म स्वीकारकर बाल्यावस्था से ही भगवे वस्त्र धारण किये थे यह वोही ऋषि हो, यह सोचकर उसकी उससे मिलने की उत्कण्ठा हुई उससे रास्ता पूछ कर हर्ष वहां गया, उस समय उसके साथ माधव गुप्त भी था।

दिवाकर ऋषि को प्रणाम कर वह सब खड़े रहे।

राज्यश्री का पता-लगाना

ऋषि ने उन्हें बैठने को आसन दिया। कुछ वार्तालाप अनन्तर हर्ष ने पूछा "भगवन मेरी एक ही एक बहिन अपने पति के वध के बाद शत्रुओं से बचकर विन्ध्या पर्वत में आई है हम इसे

खोजते खोजते थकगये हैं पर कोई पता नही लगता, यदि इस सम्बन्धि आपको कोई समाचार मिला हो तो कहने की कृपा करें। ऋषि उत्तर में बोले कि नहीं, हमें कोई समाचार नहीं मिला इतने में ही एक भिक्षुक ने आकर कहा " महाराज बहुत अनर्थ हो रहा है, एक बड़े कुल की अबला दुःखो से दग्ध हो सती होने की योजना कर रही है। आप कृपा कर इसका रक्षण करो। यह सुन हर्ष को अपनी बहिन होने का सन्देह हुआ और उसने भिक्षुक से तुरन्त पूछा यह रमणी यहां से कितनी दूर है, क्या वह अभी जीवित है, वह कौन है, कहां से आई है, और इस जङ्गल में कैसे आई है और सती क्युं होना चाहती है इत्यादि प्रश्न यदि आपने उससे पूछे हों तो कृपा कर उनके उत्तर कहिये। भिक्षुक ने आदिसे अन्त तकका सब वृत्तान्त कह सुनाया। यह सब वृत्तान्त राज्यश्री की जीवन कथा से मिलता था। तब हर्ष, दिवाकर मित्र तथा भिक्षुक के साथ उस स्थल पर गया। इस समय राज्यश्री की अन्तिम प्रार्थना के शब्द हर्ष ने सुने। मूर्च्छा से गिरती हुई राज्यश्री को बचाने के

लिये वह एकदम पहुंचा गया। इस प्रकार राज्यश्री का उद्धार हुआ। तदनन्तर सब दिवाकर मुनि के आश्रम को आये। आश्रम की पवित्रता से मुग्ध हो राज्यश्री ने बौद्ध सन्यासिनि होने की आज्ञा हर्ष से मांगी। हर्ष और दिवाकरमित्र ने ऐसा न करने को समझाया हर्ष कहने लगा कि हम अपने जीवनका उद्देश पूर्ण कर इकट्ठे ही भगवे वस्त्र धारण करेंगें। हर्ष अपनी भगिनी सहित गंगातटस्थ छावणी में लौट आया। बाण कवि ने अपने हर्ष चरित्र में यहां तक का सविस्तर वर्णन दिया है परन्तु आगे का भाग अधूरा छोड़ दिया है। हर्ष के राज्यकाल में प्रवास करने वाले प्रसिद्ध चीनी यात्री ह्युयेनत्सङ्ग ने हर्ष के पराक्रमों का वर्णन दिया है, उस पर से आगे का इतिहास जाना जा सकता है।

हर्ष का राज्याभिषेक

राज्यश्री के साथ हर्ष थानेश्वर को लौटा। थानेश्वर के कुटुम्ब में केवल वही अब जीवित था। राज्यवर्धनने विवाह नहीं किया था, ऐसा बाण के " कलंत्ररक्षत्विति श्री स्ते भिखिशेऽधिवसति " वाक्य पर से पता लगता है इस लिये उसकी कोई भी सन्तान् नही थी अब



थानेश्वर की गद्दी का उत्तराधिकारी केवल हर्ष ही था। प्रजा की अनुमति तथा सर्वानुमति से इ. स. ६०६ मे वह सिंहासनारूढ़ हुआ। ह्युयेनत्सङ्ग ने लिखा है कि गद्दी पर बैठने और न बैठने का प्रश्न कुछ काल तक हर्ष के विचाराधीन रहा। परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि यह शङ्का उसे कन्नौज की गद्दी के सम्बन्धमें हुई होगी हर्ष चरित में " अवन्तिवर्मणःसूनुरग्रजो ग्रहवर्मा " ऐसा कहा है, इस पर से यह मालूम होता है कि ग्रहवर्मा, अवन्तिवर्मा का सबसे बडा पुत्र था, फिर उसकी पत्नी राज्यश्री का स्वत्व हटाकर किसी दूसरे को वह गद्दी किस प्रकार दी जासकती थी। इतने दुःखो के पश्चात राज्यश्री का उद्धार हुआ था तो फिर उसे गद्दी का सुख क्यो नहीं दिया जाय, इस प्रकार के प्रश्न हर्ष के सामने उपस्थित हुये। ग्रहवर्मा तथा राज्यश्री बौद्धधर्मावलम्बी थे, और हर्ष वास्तव में शैव था ऐसा उसके राजकाल के नौवें वर्ष के बंसखेर के शिलालेख के ' परम महेश्वर ' से तथा बाण के ' विर नीललोहितस्यार्चम् " से कहा

के दुःखो के कारण बौद्ध हो गया था। कन्नौज के सिंहासन पर किसको बैठाना, यह निश्चित करने के लिये, कन्नौज से थोड़ी दूर रहने वाले बोधिसत्व अवलोकितेश्वर के मन्दिर में सब गये। इस साधु ने यह निर्धारित किया कि राज्यश्री कन्नौज पर राज करे और हर्ष उसका सहायक रहे, परन्तु वह राजा कि पदवी न ग्रहण कर केवल 'राजपुत्र शिलादित्य' से ही अपने आपको सम्बोधित करे। चीनी पुस्तक ' फाङ्ग चिह ' में भी ऐसा लिखा है कि इसके बाद हर्ष अपनी विधवा बहिन के साथ राज्य कार्य करता था। देवगुप्त की मृत्यु के पश्चात् थोड़े काल के लिये हर्ष ने उसका राज्य अपने अधीन रखा होगा तथा उसके वास्तविक उत्तराधिकारी माधवगुप्त को भी नहीं दिया ऐसा बाण के " अथालोच्य तत्सर्वमवनिपति स्वीकर्तुं यथाधिकारमादिदेशाध्यक्षान् " इत्यादि वाक्य से प्रकट होता है। हर्ष ने मालवा राज्य का धन तथा सिंहासन अपने अधिकारीयों के हाथ में सौप दिया था। माधवगुप्त तो हर्ष के जीवन में उसका सहवासी ही रहा होगा। बहुत

समय व्यतीत होने पर हर्ष ने उसे गङ्गा तट के पूर्व का भाग देकर महाराजा की पदवी से भूषित किया होगा ऐसा आदित्यसेन के अफसद के शिलालेख से कहा जा सकता है।

दिग्विजय निमित्त पुनः कूच

पहिले जब हर्ष दिग्विजय के लिये निकला तो उस समय राज्यश्री की खोज के कारण विघ्न पडगया था। अब उसके मिलने पर अपना उद्देश सफल करने के लिये फिर दिग्विजय निमित्त कूच की तैय्यारी की। इस समय उसके पास कन्नौज तथा थाणेश्वर की कुल सेना मिलाकर ५००० हाथी,५०,००० प्यादे तथा २०,००० घुड़सवार थे। अपने भाई राज्यवर्धन तथा कुमारगुप्त का वध करनेवाले शशाङ्कगुप्त से उसने किस प्रकार का वैर लिया यह निश्चित-रूप से मालूम नहीं हुआ। गुप्त वंशी संवत ३०० का अर्थात् इसवी सन ६१९ का ताम्रपत्र जो गंजम ग्राम से प्राप्त हुआ है, उसमें के आधीन किसी

उल्लेख है। इस पर से यह प्रकट होता है कि शशाङ्क गुप्त राजा इ. स. ६१९ तक अपने राज्यमें स्थित था। अब ऐसा अनुमान हो सकता है कि या तो शशाङ्क गुप्त ने राज्यवर्धन तथा कुमार गुप्त के वधमें जो युक्ति की थी वही हर्ष के सामने भी की होगी अथवा हर्ष ने बौद्धधर्म के प्रभाव से उसे क्षमाकर वैर लेने के विचार का परित्याग किया होगा। परन्तु हर्षने इ० स० ६४३ में जब गंजम अथवा कंगोड़ पर चढ़ाई की थी तब शशाङ्कगुप्त का राज्य भी इसके आधीन आ गया होगा ऐसा कहा जा सकता है। इस सम्बन्धमें अधिक लेख तथा इतिहास न प्राप्त होने से अभी तक निश्चितरूप में कुछ भी नहीं कहा जा सकता।

हर्षकी हार

हर्ष के समस्त विजयी जीवन में एक ही हार का उल्लेख है। जिस प्रकार गुप्त सम्राट समुद्रगुप्तने दक्षिण में पांव बढ़ाना चाहा था, उसी प्रकार हर्षने भी नर्मदाके दक्षिणमें अपना राज्य विस्तार का प्रयत्न किया था. इस समय चालुक्य वंश का राजा सत्याश्रय, द्वितीय

पुलकेशी महाराष्ट्र का स्वामी था और हर्ष का एक बड़ा प्रतिस्पर्धी था। शिलालेखों से पता चलता है कि उसकी राजधानी वातापि (आजकल जिसे बादामी कहते है) थी। ह्युयेनत्सङ्ग के कथनानुसार उसकी राजधानी कभी, नासिक भी होगी। यह राजा बड़ा बलवान तथा साहसी था। वह हर्षके साथ ही अर्थात् ई० स० ६०८ में गद्दी पर बैठा। हर्षने ई० स० ६२० में उस पर चढ़ाई की, परन्तु पुलकेशी द्वितीय ने नर्मदा पर इतना दृढ़ प्रबन्ध किया कि हर्षको निराश हो लौटना पड़ा। इस सम्बन्ध में ह्युयेनत्सङ्ग लिखता है कि " इस समय महाराजा शिलादित्य (हर्ष) पूर्व से पश्चिम तक हमले करता था और इसके आसपास के सब प्रदेशों के राजा उसका आधिपत्य स्वीकार करते थे परन्तु महाराष्ट्र उसके आधीन नहीं हुआ। ह्युयेनत्सङ्ग के जीवन चरित्रमें भी लिखा है कि " शिलादित्य राजाके प्रवीण होने तथा उसके सेनापतियों के सदा विजय लाभ करने पर भी इन की पुलकेशी द्वितीय के सामने कुछ भी नहीं चली, इस समय भारत वर्षमें एक इसवी सन में सिंहासनारूढ राजे राज्य

करते थे और नर्मदा नदी उनके राज्यों की सीमा थी। एक शिलालेख में पुलकेशी द्वितीय का वर्णन " समर संसक्त सकलोत्तरापथेश्वर श्रीहर्षवर्धन पराजयोपलब्ध परमेश्वरापर नामधेयः सत्याश्रयः श्रीपृथ्वीवल्लभो महाराजाधिराजः " ऐसा आया है। इस परसे कहा जा सकता है कि हर्ष ' सकलोत्तरापथेश्वर ' अर्थात् अखिल उत्तरीय भारत का राजा था।

गुजरातकी जीतें

इ. स. ६३३ में हर्षने सौराष्ट्र के वल्लभी वंशके राजा दूसरे ध्रुवसेन (ध्रुवभट्ट) को हराया, वह भरुचके राजाके हां भाग गया, अन्तमें उसने हर्षसे सन्धि करली तथा उसको अपनी पुत्री विवाहमें देने का वचन दिया। उसने कर देना भी स्वीकार किया। इसी चढ़ाईमें हर्षने सौराष्ट्रमें स्थित आनन्दपुर ग्राम और सोरठ प्रान्त तथा सौराष्ट्रके उत्तर कच्छ प्रदेशको भी अपने आधीन किया होगा। भरुचके राजा दादाके दान पत्रसे ऐसा पता लगता है कि इ. स. ६४१ में पश्चिम का यह सब प्रदेश मालवाके आधीन था

इस प्रकार हर्षकी दिग्विजयका वर्णन यत्र तत्र मिलता है परन्तु श्रृंखला बद्ध विस्तृत वर्णन कहीं भी देखने में नहीं आता ।

दिग्विजयका विस्तार

ह्युयेनत्सङ्ग लिखता है कि " पूर्व से पश्चिम तक जो राजा लोग आधीन नहीं हुये थे उन पर इसने आधिपत्य जमाया, और बहुत काल तक उसके हाथी और पैदल सैनिक अपने युद्ध वस्त्रोंसे सुशोभित रहे । हर्षने समस्त राजाओं पर विजय लाभ की इसका वर्णन आगे किया जायगा इस स्थल पर बाण कवि के हर्ष चरित के निम्न वाक्य विचारणीय हैं ।

अत्र बलजिता निश्चलीकृता ज्वलन्तः कृतपक्षाः क्षितिभृतः । अत्र प्रजापतिनाशेषभोगिमण्डलस्योपरि क्षमाकृता । अत्र पुरुषोत्तमेन सिन्धुराजं प्रमथ्य लक्ष्मीरात्मीयाकृता अत्र बलिना मोचितभूभृद्वेष्टनो मुक्तो महानागः । अत्र देवेनाभिषिक्तः कुमारः ।

अत्र परमेश्वरेण तुषारशैलभुवो दुर्गाया गृहीतः करः । अत्र लोकनाथेन दिशां मुखेषु परिकल्पिता लोकपाला

इन सब वाक्योंके दो अर्थ हो सकते हैं इन वाक्यों के एक अर्थसे हर्षके दिग्विजय पर एक दृष्टिपात कर सकते हैं। वह इस प्रकार है कि " इस विजेताने कई राजाओंको (उनके अपने राज्यमें) स्थिर कर दिया, और उनके सहायकोंको मार भगाया। इस प्रजापतिने सब राजाओं तथा सरदारोंको क्षमा प्रदान की (और राज्य करने दिया) इस पुरुषोत्तमने सिन्ध का राज्य जीत कर उसका धन आधीन कर लिया। इस बलवान राजाने राजा (कुमार) को हाथीकी सूंडसे छुड़ा कर हाथीको भगा दिया। इस महा ऐश्वर्य्य वालेने हिमालय पर्वतके दुष्प्राप्य देशोंसे भी कर लिया। इस लोकनाथने भिन्न भिन्न देशोंमें रक्षक तथा अधिकारी नियत किये " इन वाक्यों पर से तो यह प्रकट होता है कि हर्षने भारतके मुख्य भागों पर आक्रमण किये थे और प्रत्येक राजाको अपने राज्यमें स्वतंत्र राज करने की स्वीकृति दी थी। इस समय ऐसा नियम नहीं था कि जीतने वाला राजा दूसरे राज्यों को अपने राज्य में जोड़ ले, किन्तु पराजित राजा, विजेता का प्रभुत्व स्वीकार कर उसको

कुछ कर दे तथा उत्सव इत्यादि अवसरों पर दरबार में उपस्थित हो, इतना ही पर्याप्त था । हर्ष ने भी इसी नियम का अनुसरण किया होगा, ऐसा प्रकट होता है। बाणने उपरोक्त वाक्यों में कई देशों के नाम भी दिये है, हिमालय के आगे का प्रदेश कदाचित् नैपाल हो। हर्षने जिस कुमार को राजा बचाया था वह प्राग्ज्योतिष (आसाम) का भास्करवर्मा उपनामधारी कुमार राजा ही होगा। यह कुमार राजा हर्ष का मित्र बना था यह पूर्व लिखा जा चुका है। बाण का कहना है कि हर्षने कुमार राजा को हाथी की सूंढ से छुड़ाया था। यह कथा इस प्रकार है कि जिस हाथी पर हर्ष सवारी कर रहा था, उस हाथीने कुमारराज को अपनी सूण्ड में पकड़ लिया। हर्ष का बल और साहस बड़ा चढ़ा था, इस लिये उसने तलवार से उसकी सूण्ड काट डाली और कुमार राजा को मुक्तकर हाथी को जङ्गल में हांक दिया। इ. स. ६०८ में गद्दी पर बैठने के अनन्तर छै वर्ष में ही अर्थात् इ. स. ६१४ तक हर्ष ने अपनी दिग्विजय समाप्त की। इसके पश्चात् यत्र तत्र जो उसने विजय काम की वह इस से भिन्न है।

संक्षेप रूप में उसने गङ्गा पार का हिमालय से नर्मदा तक का सब प्रदेश तथा नैपाल, मालवा, गुजरात काठियावाड़ इत्यादि सब प्रदेशों पर अपना आधिपत्य जमाया। पूर्व काल के गुप्त मालव इत्यादि राजाओं के समान उसने भी अपना संवत निकाला था। उसका प्रथम वर्ष इ. स. ६१४ से नहीं किन्तु इ. स. ६०८ से आरम्भ होता है।

राज्य व्यवस्था

इतने बड़े विस्तृत राज्य पर अकेले शासन करना असम्भव होने से बाण के उपरोक्त कथनानुसार हर्षने सब स्थलो पर अधिकारी तथा रक्षक रखे थे, किन्तु हर्ष का ऐसा विचार था कि राजा की अपनी देखरेख विना कार्य्य ठीक नहीं चलता, इस लिये वह सब ठाट से आठ महीने तक अपने राज्य में घूमा करता था। वर्षा काल में घूमना बौद्ध धर्म में मना है, और तिस पर इतने ठाट से घूमना और भी कठिन है। अतः वर्षा ऋतु के चार महीने वह अपनी राजधानी में ही व्यतीत करता था अपनी मुसाफरी में वह सद्गुणी लोगों को

इनाम और दुर्गुणीयों को दण्ड देता था। उस समय आज कल की तरह तम्बु नहीं थे परन्तु बाण के लेखानुसार पत्ते और शाखाओं से बने हुये "घूमते महल" प्रत्येक स्थल पर बनाये जाते थे। ऐसे महल राजा के दूसरी जगह जाने पर जला दिये जाते थे। हर्ष दरबारी ठाट में ही मुसाफरी करता था तथा उसके आगे आगे सोने के ढोल बजते थे।

हर्ष की राज्यव्यवस्था बहुत उत्तम सिद्धान्तों पर रची गईथी। राज्य का मुख्य कर सरकारी भूमि से उपजता था। प्रायः भूमिकर राज्य की समग्र आय का छठा भाग होता था। अफसरों को वेतन के स्थान में ज़मीन मिलती थी आजकल के समान उस समय बेगार की प्रथा नहीं थी। प्रजा पर कर का बोझ भी नहीं था। धर्म संस्थाओं को धन की सहायता देने का अच्छा प्रबन्ध किया गया था। उस समय आजकल के समान अनाचार भी नहीं था, किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि चोरी तो जैसी आजकल है वैसी ही होगी कारण कि चीनी यात्री ह्युयेनत्सङ्ग कई

वेर चोर डाकुओं से घिरा था ऐसा वह स्वयं लिख गया है। साधारण अपराध के लिये कैद का दण्ड था और कई वेर बन्दी को भूखे भी मार दिया जाता था। भयङ्कर पाप वा राजद्रोह क लिये अपराधी के हाथ, नाक, कान, पैर इत्यादि काट डालना विहित था, तो भी हर्ष इसका पालन न कर, उन्हें देश निकाला देता था। छोटे अपराध के लिये जुरमाना किया जाता था। विष, देवता, बोझ, पानी इत्यादि दिव्य उपायों द्वारा अपराधी से दोष की स्वीकृति कराई जाती थी। प्रत्येक प्रान्त में एक विशेष अधिकारी द्वारा अच्छे अथवा बुरे कार्य्यों तथा जीत हार का वर्णन वृत्तान्त पत्र में लिखा जाता थ। अभी तक कोई ऐसा पत्र हाथ नहीं लगा यह विचारणीय बात है। उस समय विद्या का प्रचार बहुत था और विशेषतय: ब्राह्मणों तथा बौद्ध यतिओं में इसका प्रसार अधिक था। मौर्य्य साम्राट अशोक जो हर्ष से नौ शताब्दि पूर्व हो चुका है, एक ही युद्ध कर संतुष्ट हो गया था, किन्तु हर्षने लगभग ३७ (सैतीस) वर्ष तक युद्ध करने के पश्चात् ही अपनी तल्वारको म्यान में डाला और अशोक का अनुकरण

कर शान्ति भोगने तथा दया धर्म के कार्य्य करने की इच्छा की।

दया धर्म के काम

हर्ष के समय बौद्ध धर्म का विशेष प्रचार था। इस धर्म की दो शाखाएं हैं (१) महायान (२) हीनयान। गौतम बुद्धने जब यह नया पन्थ* स्थापन किया तो वह केवल संन्यास वृत्तिवाला था, आत्मा के अस्तित्व पर उसका विश्वास नहीं था। वह निर्वाण अथवा मोक्ष मानता था। मनुष्य को संसार छोड़ जङ्गल में रह कर कर्म संन्यास करना चाहिये यही वह प्रतिपादित करता था। उसकी मृत्यु के पश्चात् उसके अनुयायीओं को यह ध्येय अच्छा नहीं लगा इस लिये वह भक्ति मार्ग का भी अनुकरण करने लगे, और वैदिक धर्मानुसार उपासना पूजा इत्यादि का भी उपदेश करने लगे। मनुष्य कर्म संन्यास न कर लोगों पर उप-

---

* वास्तव मे यह केवल पन्थ है परन्तु

कार तथा उपयोगी होने का यत्न किया करे ऐसा उन का मत हो गया। ऐसा कहा जाता है कि नागसेन ने नई शाखा स्थापित की थी। इसको महायान कहते हैं और बुद्ध की स्थापित शाखा हीनयान कहाती है। हर्ष को इन दोनों शाखाओं के लिये पूज्य भाव था, वह महा भक्त हो कर रहता था। मनुष्य जीवन से प्राणी जीवन बौद्ध धर्म में विशेष कीमती है इस सूत्र का पालन हर्ष बहुत सावधानी से करता था " धर्मरूपी बीज बोने का वह इतना प्रयत्न करता था कि खाना और सोना भी भूल जाता था यदि कोई जीवहिंसा अथवा मांसाहार करता तो उसे प्राण दण्ड दिया जाता था।

अशोक के पथ पर चलते हुए हर्ष ने समस्त राज्य में यात्रिओं, प्रवासियों गरीबों तथा रोगियों के निमित्त धर्मार्थ संस्थाए स्थापन की थी। शहरों तथा गांवों में धर्मशालाएं बनाई गई थीं, जिन में खाना विना मूल्य दिया जाता था। रोगियों को औषधि देने के लिये वैद्यों का भी प्रबन्ध था उसने हिन्दु धर्म

तथा बौद्ध धर्म सम्बन्धि अनेक संस्थाए स्थापित की थी। उस के द्वारा असंख्य मठ तथा गङ्गा तट पर सौ पाद ऊचें अनेक स्तूप बनवाये गये थे। उस समय बौद्ध धर्म का ऱ्हास हो रहा था, फिर भी उस के बनवाये हुये मठों में बौद्ध पन्थ के दो लाख साधु रहते थे*, साधारणतयः लोगों की बौद्ध धर्म में अधिक श्रद्धा थी। वैशाली तथा पूर्व बङ्गाल में जैन धर्म का बहुत प्रचार था परन्तु बौद्ध धर्म तथा पौराणिक धर्म (हिन्दु धर्म) से उस के अनुयायीओं की संख्या कम थी लोग अपना अपना धर्म शान्ति पूर्वक पालते थे। लोगों में धार्मिक झगड़े वैसे कम नहीं थे। राज्यवर्धन के घातक शशाङ्कगुप्त ने इ. स. ६०० में बुद्ध गया का बोधि वृक्ष गिरवा कर जलवा दिया तथा बुद्ध के पाद चिन्ह का पत्थर भी तुड़वा दिया था। उसने अनेक मठ नष्ट कर साधुओं को विखेर दिया था। मगध के राजा पूर्णवर्मा ने बोधि वृक्ष को पुनः स्थापन किया।

---

* देखो जर्नल आफ रॉयल एशियाटिक सोसाईट

इस प्रकार कभी कभी लोग धर्मान्ध हो जाते थे परन्तु प्रायः लोगों में सहनशीलता ही थी ऐसा कहना चाहिये।

हर्ष और ह्युयेनत्सङ्ग

पूर्वकाल के हिन्दुओं में एक ही कुटुम्ब के लोग अपनी अपनी इच्छानुसार, शैव वैष्णव वा बुद्ध पन्थ पाल सकते थे, और और बौद्ध धर्म को हिन्दु धर्म से भिन्न नहीं माना जाता था किन्तु व्यवहार दृष्टि में यह आर्य्य धर्म की दो महा॰ शाखाएं समझी जाती थीं। हर्ष के कुटुम्ब में ही एक प्रकार की पूजा नहीं होती थी। पुष्पभूति शिवजी का भक्त था, प्रभाकरवर्धन सूर्य्य भक्त था, राज्यवर्धन और राज्यश्री बुद्ध के अनुयायी थे। स्वयं हर्ष शिव, सूर्य्य और बुद्ध तीनों का भक्त था। उसने इन तीनों के मन्दिर बनवाये थे। आरम्भ में हर्ष सम्मिलीय-पन्थ के हीनयान मार्ग में था परन्तु बाद में जब वह बङ्गाल में चीनी न्यायेश्वर ह्युयेनत्सङ्ग को मिला, तो उस के प्रभाव से महायान मत का अनुयायी हो गया। उस समय स्त्रियों को परदे में नहीं रखा जाता था, इस लिये वह और राज्य-

श्री दोनों ह्युयेनत्सङ्ग का धार्मिक संवाद सुनते थे। ह्युयेनत्सङ्ग कभी संवाद में हार न जाय इसकी चिन्ता हर्ष को बहुत रहती थी। एक वार इस प्रकार के संवादों के कारण ह्युयेनत्सङ्ग का जीवन सङ्कट में पड़ गया और हर्ष को यह डोण्डी पिटवानी पड़ी " कि इस न्यायेश्वर को यदि कोई छूयेगा तो उसके प्राणहरण किये जायेंगे और जो कोई इस के विरुद्ध बोलेगा उसकी जीभ काटली जायगी, परन्तु जो मेरी कृपा का लाभ उठा कर इसका उपदेश सुनने आयेगा उसे डरने की कोई बात नहीं।" इस ढण्डोरे का यह परिणाम हुआ कि १९ दिन में ही ह्युयेनत्सङ्ग का कोई प्रतिद्वन्दी न रहा। ह्युयेनत्सङ्ग के विवाद से हर्ष इतना प्रसन्न हुआ कि उसने अपनी नई राजधानी कनौज में विशेष सभा कर अपने गुरु (ह्युयेनत्सङ्ग) के उपदेश सुनवाने का निश्चय किया। अपने साथ बहुत से आदमियों को ले कर वह गङ्गाके दक्षिण तट पर होता हुआ गया। गङ्गा के दूसरे किनारे किनारे काम रूप (प्राग् ज्योतिष) का कुमार राजा बहुत से पुरुषों सहित कन्नौज के लिये चल दिया। ९९ दिन में सब कन्नौज पहुच गये उस समय

इ. स. ६४३ का फेब्रुआरी वा मार्च महिना होगा। कुमार राजा, वल्लभी के राजा तथा इस प्रकार अन्य १८ राजाओं ने हर्ष का स्वागत किया। इस समय विहार के नालन्द मठ के एक हज़ार के लगभग तथा जैन ब्राह्मण कुल मिला कर ३ वा ४ हज़ार साधु वहां उपस्थित थे। इस अवसर के लिये गङ्गा तट पर एक विशेष मठ बनवाया गया था और एक सौ पाद ऊंचे मिनार में हर्ष के कद की बुद्धदेव की एक सोने की मूर्ति स्थापित की गई थी हर्षने शक्रदेव का वेश पहिना और कुमार राजाने ब्रह्मा का स्वरूप लिया था हर्षने इस समय अनेक कीमती भेट लोगों को दी। एक दिन अचानक उपरोक्त मठ में आग लग गई और उसका एक बड़ा भाग जल गया परन्तु हर्ष के आने से वह आग अद्भुत प्रकार से बुझ गई। स्तूप के ऊपर चढ़ कर जब हर्ष सृष्टि का सौन्दर्य देख उतर रहा था तो एक पागल मनुष्यने छुरी द्वारा उसका वध करना चाहा, परन्तु आसपास के मनुष्योंने उसे पकड़ लिया और इस प्रकार हर्ष की रक्षा हुई। अन्त में उसी आदमी ने स्वयं ही स्वीकार किया कि हर्ष बौद्ध लोगों पर विशेष प्रेम

रखता था इस लिये विरोधियों ने उसका वध करने को उसे उकसाया था। मठ को भी इन्हीं लोगों ने आग लगाई थी। हर्ष ने इन में से कई षड्यंत्रकारियों को दण्ड किया।

कन्नौज की सभा विसर्जन कर हर्ष ह्युयेनत्सङ्ग को ले कर प्रयाग पहुंचा। बहुत काल से यह प्रथा चली आती थी कि राजा प्रत्येक पांच वर्ष पश्चात् प्रयाग में एक महा सभा कर सब धर्मों के अनुयायियों तथा गरीबों को असंख्य वस्तुएं दान करता। इसी प्रथानुसार हर्ष इ. स. ६४३ में छट्ठी बार प्रयाग आया और एक बड़ी सभा की। इस समय भिन्न भिन्न स्थानों के लगभग ६ लाख मनुष्य उपस्थित थे और ७५ दिन तक भिन्न भिन्न क्रियायें की गईं। इस काल में असंख्य वस्तुओं का दान हुआ। सब क्रियाओं के समाप्त होने के दस दिन बाद ह्युयेनत्सङ्ग ने अपने देश को जाने की तैय्यारी की। लम्बे प्रवास निमित्त हर्ष ने और कुमारराज ने तीस हजार सोने के और दस हजार चान्दी के सिक्के हाथी पर लाद दिये

और उसके साथ उधित नामके राजा को भेजा। छ महिने में ह्युयेनत्सङ्ग जलन्धर पहुंचा और वहां एक मास रह कर अपने देश को चला गया, उधित उसे पंहुचा भारत पुनः लौट आया। ह्युयेनत्सङ्ग अपने साथ ६५७ पुस्तकें, सोने और चन्दन की बुद्ध की अने मूर्तिएं कुमार राजा से प्राप्त पुष्कल धन तथा ३५० अन्य वस्तुएं बुद्धकी स्मृति रूप में लेगया। उसने हमारे देश के ८४ ग्रन्थों का अनुवाद चीनी भाषा में किया है. इ. स. ६६५ में वह मृत्यु को प्राप्त हो गया।

हर्ष की मृत्यु.

हर्षने इ. स. ६४१ में चीन के महाराजा के पास अपना एक राजदूत भेजा था। वह वहां दो वर्ष रह कर उत्तर ले लौट आया। वह इ. स. ६४५ तक भारतवर्ष में रह कर चीन को लौट गया। उसके दूसरे वर्ष बाद अर्थात् इ. स. ६४६ में चीन के महाराज ने वङ्गह्युसेनत्से नामक एक दूसरा एलची ३० घोड़े स्वारों के साथ हर्ष के दरबार में भेजा परंतु उसके मगध देस में आने से पूर्व ही हर्ष की मृत्यु हो चुकी थी

हर्ष के बाद उसका प्रधान अर्जुन गद्दी को दबा बैठा। उसने वङ्गहुसेनत्से का अपमान किया और उसका माल लूट कर उसके साथियों को मार दिया। वङ्गहु-

मरने के बाद की व्यवस्था.

सेनत्से बचे हुये थोड़े मनुष्यों के साथ रात के समय भाग निकला, जिससे उसके जीवन की रक्षा हुई। वह भागता हुआ सीधा तिब्बत पंहुचा वहां के राजा ने उसे आश्रय दिया और उसके साथ १००० सवारों की सेना भेजी, और नेपाल के राजा ने सात हजार सिपाहियों की सहायता दी। इस सेना को लेकर वङ्गहुयेनत्से लौटा और तिरहुत को आधीन कर लिया। वहां के तीन हज़ार सिपाहियों को उसने मार डाला और सात हजार आदमी डर के मारे नदी में डूब मरे! अर्जुन वहां हार गया और नई सेना इकट्ठी कर लड़ाई करने को फिर उद्यत हुआ। परंतु वङ्गहुसेनत्से ने उसे फिर हराया और उसे कैद कर उसके आदमियों को भी बन्दी बना लिया इस के उपरान्त

चीन के राजा की आज्ञा से वह फिर इ. स. ६५७ में भारत को आया, परंतु इस बार वह केवल बौद्ध धर्म के पवित्र मंन्दिरों को दान करने के हेतु से आया था। वह नैपाल के वैशालि और बुद्धगया के स्थानों पर गया वहां से काबुल उत्तर अफगानिस्थान, हिन्दुकुश तथा पामीर होता हुआ अपने देश को वापिस लौटा।

हर्ष के काल के राजे राज्य इत्यादि.

हर्ष के अन्तिम दिनों में भारत की दशा कैसी थी तथा इसने किन किन राजाओं को अपने वश में किया था और कौन कौन सा राज्य उसके आधीन था, उसका वर्णन ह्युयेनत्सङ्ग के लिये लिखे हुये वृतान्तों से स्पष्ट होजाता है। यह सब वर्णन इस लघु पुस्तक में क्रमानुसार नहीं आसकता परंतु संक्षेप में हम यहां लिखते है, पर यह वृतान्त माना जा सकता है क्यों कि शिला लेखों तथा ताम्रपत्रों से इसका अनुमोदन हो सकता है

बौद्धधर्मी क्षत्रिय राजा राज्य करता था। इसका नाम ह्युयेनत्सङ्ग ने नहीं दिया। सिन्धु नदी का दूसरी तरफ का प्रदेश लम्पक नगर तथा गान्धार भी उसके आधीन था। गान्धार का राजवंश नष्ट हो चुका था, जहां तहां जो खंडहर दीखते थे वह हर्ष के पिता प्रभाकरवर्धन के समय के हूण लोगों के होंगे ऐसा अनुमान होता है। इसके बाद सिन्ध के उस पार ही सुवस्तु (स्वात) का उद्यान आता है, इस समय वहां बौद्ध धर्म का प्रचार पूर्ण रूपसे था। सिन्धु नदी की इस ओर सबसे पहिले काश्मीर का राज्य आता है उसके आधीन तक्षशिला, सिंहपुर और उरश के राज्य थे। उस समय वहां दुर्लभवर्धन राजा राज्य करता था 'राज तरङ्गिणी' के अनुसार इस राजा ने वहां कर्कोट वंश की स्थापना की थी। वह इ. स. ६०१ में गद्दी पर आया और उसने ३६ वर्ष तक राज्य किया अर्थात् वह आदि से अन्त तक हर्ष का समकालीन था। वह बलवान था, परन्तु हर्ष के आगे उसे झुकना पड़ा और कर देना भी उसने स्वीकार किया था

इसके बाद टेक्का का देश, आता है जिसका मुख्य नगर साकल था । वहां पूर्व काल में मिहरकुल राज्य करता था । ह्युयेनत्सङ्ग के समय में साकल में खण्डहर ही दीखते थे । टेक्का का नाम ह्युयेनत्सङ्ग ने दिया है इसका भारतीय नाम क्या है यह ढूंडने का यत्न करना चाहिये । चचनामा * में लिखे हुये टाक नाम के साथ और भारतवर्ष के ३६ राजवंशो में से 'तक्षक' अथवा 'ताक' के साथ इसका सम्बन्ध होना चाहिये। मूलस्थानपुर (मुल्तान) और पर्वतनगर इस समय इसके आधीन थे । इस देश में केवल बौद्ध धर्म का ही प्रचार न था, किन्तु मुल्तान में सूर्य्यदेव का प्रख्यात मंदिर था, जहां भक्त लोग दर्शनार्थ जाते थे। इस देश का राजा पंजाब में सब से बलवान और प्रसिद्ध था । इसका देश काश्मीर और थाणेश्वर के बीच होने से हर्ष ने इसे हराया होगा ऐसा अनुमान हो सकता है ।

इस के बाद सिन्ध आता है, इसकी राजधानी सिन्धु नदी के उस पार थी तथा पश्चिम और दक्षिण में, नदी पर स्थित, दो तीन छोटे राज्य इस के आधीन थे, अर्थात् आजकल के सिन्ध जितना ही उस समय का सिन्ध प्रदेश था। यद्यपि वहां का राजा बलवान था तथापि प्रभाकरवर्धन और हर्ष ने उसे हराया था, यह हम ऊपर लिख ही चुके है। ह्युयेनत्सङ्ग लिखता है कि यह राजा बौद्ध धर्मी शूद्र था। चच-नामा में लिखा है कि ब्राह्मण राजा 'चच' के पहिले एक वंश वहां राज्य करता था। इस वंश का पूर्वज दैवेज था और इसका अन्तिम राजा साहसीराय था। साहसी के मरने के बाद उसके दरबारी ने गद्दी धर दबायी और उसकी विधवा के साथ विवाह किया। इ. स. ६३२ में मुसलमानों ने सिन्ध पर पहिली बार चढ़ाई की थी उस समय वहां चच राजा था और ३५ वर्ष से वह राज्य कर रहा था ऐसा चचनामा के लेखक का कथन है। इ. स. ५९७ में उसने गद्दी छीन कर चालीस वर्ष तक राज्य किया अब इ स

६४१ में जब ह्युयेनत्सङ्ग इस देश में आया, तब चंद्र राज्य करता होगा ऐसा अनुमान हो सकता है। वह बौद्ध था ऐसा चचनामें में भी कहा है। ह्युयेनत्सङ्ग ने उसे ब्राह्मण न कह शूद्र लिखा है, यह उसकी भूल होगी, ऐसा हम नहीं कह सकते, कारण कि चचनामें में तो केवल सुनी हुई बातों के आधार पर लिखा गया है, इसलिये उसका विश्वास नहीं किया जा सकता। इतिहास की कई बातों पर विचार करने से यह अनुमान होता है कि उस समय साहसीराय द्वितीय राज्य करता होगा चन्द्र नहीं क्योंकि चच ने मुल्तान और पर्वत जीत कर काश्मीर तक अपना राज्य विस्तार किया था और वह बहुत बलवान था। इस लिये चच ने ५९७ में नहीं किंतु ६४८ में गादी छीनी होगी और वह इ. स. ६८८ में मर गया होगा। इसके बाद चन्द्र ने इ. स. ६९५ तक राज्य किया होगा, और फिर उसका लड़का दाहिर गादी पर बैठा था जिसे इ. स. ७१२ में महम्मद कासिम ने हराया था

इसके बाद वल्लभी का राज्य आता है। वहां का राजा ध्रुवभट्ट क्षत्रिय था तथा हर्ष का दामाद था। वह रणसंग्राम में भी हर्ष के साथ जाया करता था, और इ. स. ६४२ की प्रयाग वाली सभा में वह उपस्थित था। हूण लोगों के त्रास से अयोध्या से भागा हुआ सेनापति भट्टारक ने लगभग इ. स. ४८५ में वल्लभी वंश स्थापित किया था। ताम्रपत्रों इत्यादि से ऐसा प्रतित होता है कि इस वंश के राजा शैव थे केवल ध्रुवभट्ट ही बौद्ध था।

इसके अनन्तर राजपुताना का गुर्जर राज्य आता है इसका मुख्य नगर भिनमाल था, वहां का राजा बौद्ध धर्मावलम्बी क्षत्रिय था, वह व्याघ्रमुख राजा का लड़का होगा। व्याघ्रमुख के राजकाल अर्थात् इ. स. ६२८ में प्रसिद्ध खगोलवेत्ता ब्रह्मगुप्त ने खगोल विद्या का पुस्तक रचा था। ह्युयेनत्सङ्ग के समय व्याघ्रमुख का यह पुत्र युवा होगा। हर्ष के पिता ने इस देश को जीता था, यह हम पूर्व कह चुके हैं, परंतु हर्ष की दिग्विजय में इस देश का नाम नहीं आता, फिर

भी ह्युयेनत्सङ्ग लिखता है कि वह हर्ष की सत्ता को स्वीकार करता था।

इसके बाद वल्लभी की दक्षिण में स्थित गुजरात का भृगुगच्छ वा भरुकच्छ (आज कल का भड़ोच) आता है। उपर लिखे गुर्जर वंश के किसी राजा ने यह देश बसाया होगा, और फिर इसका नाम गुजरात पड़ गया होगा। इस समय इस देशकी राजधानी भरुच्च (भड़ोच) थी और दादा द्वितीय राज्य करता था। ताम्रपत्रों द्वारा उसकी वंशावलि मालूम हो सकी है और " विपुलगुर्जरनृपन्वय प्रदीपतो " * इत्यादि वचन से उसका गुर्जर वंशी होना सिद्ध हो जाता है। इस वंशके राजा सूर्यदेव को पूजते थे, तथा भिनमाल में सूर्य्य का मन्दिर था इस लिये उपरोक्त वंश से इसका सम्बन्ध और भी दृढ़ होता है। इस वंश का पहिला राजा दादा प्रथम था वह लगभग इ. स. ५२८ में यहां आया था और उसने यह राज्य स्थापित किया। उसके बाद जयभट्ट और बाद दादा द्वितीय राजा हुआ वह

स्वतंत्र राजा होने पर भी महासामन्त ही कहाता था। हर्ष ने वल्लभी के राजा ध्रुवभट्ट पर जब चढ़ाई की तब इसी दादा ने वल्लभी राजा को सहायता दी थी ऐसा कहा जाता है, इसका उल्लेख हम पूर्व कर चुके हैं।

इसके बाद ह्युयेनत्सङ्ग ने मोलपो, अथवा मालवा राज्य का वर्णन किया है। वह लिखता है कि "इसकी राजधानी मही नदी की आग्नेय दिशा की ओर थी....नैऋत्य दिशा में स्थित मालवा और ईशान दिशा में मगध, यह दो विद्या के मुख्य केंद्र थे" यह वर्णन समस्त मालवा का है, परन्तु ह्युयेन-त्सङ्ग का मोलपो आजकल का पश्चिम मालवा होना चाहिये, और महीनदी के उस पार की धारानगरी उसकी राजधानी होगी। जौनपुर के ईश्वरवर्मा के शिलालेख में धारा का नाम आता है, इस लिये यह नगरी इस समय भी होगी। इस पश्चिम मालवा का राजा कौन था, इस का पता नहीं लगा। ह्युयेन-त्सङ्ग लिखता है, कि उसके वहां जाने के साठ वर्ष पूर्व शिलादित्य नामक दयालु नामक राजा राज्य करता

था। वह बौद्ध धर्मी था और उसके राजमहल के पास एक बौद्ध मंदिर था। "वह मक्खी को भी नहीं सताता, तथा उसके घोड़े और हाथियों को पानी छान कर दिया जाता, जिससे जीव हत्या न हो। जीवों की हिंसा नहीं करनी चाहिए यह बात उसने अपनी प्रजा को भली प्रकार समझा दी थी। इस प्रकार काम करता हुआ वह पचास वर्ष पूर्व राजगद्दी पर रहा" इ० स० ५२० में वह गद्दी पर बैठा था। राजतरिङ्गिणि में विक्रमादित्य का पुत्र मालवा का राजा—शिलादित्य था ऐसा उल्लेख है। उसके शत्रुओं ने उसे उसकी राजधानी से मार भगाया था, परंतु काश्मीर के प्रवरसेन द्वितीय ने उसका राज्य उसे वापिस दिला दिया। इस प्रवरसन ने इ० स० ५४० में नए काश्मीर को अपनी राजधानी बनाई। मालवा के विक्रमादित्य यशोधर्म राजा ने इस प्रवरसेन से पूर्व मत्रिगुप्त नामक राजा को राज्य करने के निमित्त भेजा था। विक्रमादित्य के पुत्र प्रतापशील उपनामधारी शिलादित्य से उसके शत्रुओं ने उसका प्रदेश छीन

लिया था और प्रवरसेन ने उसे वापिस दिलवाया था। ऐसा अनुमान हो सकता है कि यही प्रतापशील उर्फ शिलादित्य मालवा का—अर्थात ह्युयेनत्सङ्ग के मोलपो का राजा हो।

परन्तु यह कुछ सन्दिग्ध रह जाता है। ह्युयेन-त्सङ्ग लिखता है कि हर्ष का दामाद—वल्लभी का राजा-ध्रुवभट्ट मालवा के शिलादित्य का भाञ्जा था परन्तु यहां उसने रिश्तेदारी के सम्बन्ध में गरबड़ की है, वास्तवमें मालवा के शिलादित्य और ध्रुवभट्ट के पिता सगी बहिनो के लड़के अर्थात—मौसेरे भाई—होगें। यदि इस प्रकार समझा जाय तो मालवा का शिलादित्य ही ह्युयेनत्सङ्ग के मोलपोका शिलादित्य होगा, यह निश्चयात्मकरूप से कहा जा सकता है। ऐसी धारणा हो सकती है कि जब ह्युयेनत्सङ्ग वहां गया हो तब शिलादित्य का पौत्र राज करता हो। इस वंश ने इ. स. ५२८ से ८४० तक पश्चिम मालवा में राज्य किया होगा।

अब क्रमानुसार उज्जयिनि आती है। चम्बल नदी द्वारा पश्चिम मालवा से विभाजित पूर्व मालवा की

यह मुख्य नगरी थी। अशोकने अपराधियों के दण्ड देने निमित्त यहां एक बन्दीगृह बनवाया था। यहां ब्राह्मण राजा राज्य करता था, इतना ही वर्णन हमें ह्युयेनत्सङ्ग से प्राप्त हुआ है। कभी हर्ष ने ही उसे राजा बनाया हो, अथवा वह स्वयं ही गद्दी दबा बैठा हो, और हर्ष ने उसकी ओर ध्यान न दिया हो ऐसा हो सकता है। हर्ष के राज्य लाभ के आरम्भ में वहां गुप्त वंश का प्रभुत्व था। पाटलिपुत्र और अयोध्या के गुप्त वंशी राजाओं ने इ. स. ४०० में मालवा और उज्जयिनि को जीत लिया था। स्कन्दगुप्त की मृत्यु के पश्चात गुप्त वंश का अन्त हो गया परन्तु इ. स. ४८० से इ. स. ५०० तक बुद्धगुप्त नामक राजा जमना से नर्मदा तक राज्य करता था, ऐसा हम एरण के शिला लेखों तथा उनके सिक्कों पर से कह सकते हैं। गुप्त सरदारों ने भिन्न भिन्न स्थानों पर भिन्न भिन्न शाखाएं स्थापित की थीं। इस वंश के देवगुप्त को राज्यवर्धन ने मार डाला था, इस के बाद हर्ष ने भी इ. स. ६०६ में उज्जियिनि को आधीन किया था। इस के उपरान्त ह्युयेनत्सङ्ग ने 'चिचिरों' तथवा झजोटि नगर तथा

तथा महेश्वरपुर इत्यादि का भी वर्णन किया है। चिचिर आजकल के बुन्देलखण्ड में होगा उसकी राजधानी ऐरण होगी ऐसा अनुमान किया गया है। महेश्वरपुर आजकल का ग्वालियर (अथवा कभी नरवर हो) ऐसा अनुमान कर सकतें हैं। इन तीनों राज्यो में ब्राम्हण राजे राज्य करते थे और इन पर हर्ष का थोड़ा बहुत प्रभुत्व होगा ही ऐसा माना जा सकता है।

अब मध्यम हिन्दुस्तान में थाणेश्वर कन्नौज और दिल्ली आती है। इस समय गङ्गा और जमना नदीओं में से नहर निकाल कर आसपास के प्रदेशों को पर्याप्त पानी देने की योजना से यह भू भाग बहुत ही उपजाऊ हो गया था, इसी लिये यहां अनेक प्रसिद्ध राज्य हो चुके हैं। जन्मेजय के कुरु और पांचाल राज्यों समान, हर्ष के यह थाणेश्वर और कन्नौज थे तथा हर्ष भी जन्मेजय जैसा साम्राट बना था। हर्ष ने कन्नौज को अपनी राज्यधानी बनाई अत यह नगर सब से बढ गया। मैखरि वंश के

बसाया था, हर्ष के पिता पितामहों ने गङ्गा के पश्चिम में थाणेश्वर को बढ़ाया था। हर्ष के कन्नौज को महत्व देने से पाटलिपुत्र फीका पड़ गया।

मौर्य्य सम्राट चन्द्रगुप्त ने पाटलिपुत्र को राजधानी बनाया था। अशोक ने उसे ही राजधानी रक्खा और फिर उसके बाद सब राजाओं ने उसका अनुकरण किया परन्तु जब गुप्त राजाओं ने अयोध्या अपनी राजधानी बनाई तो पाटलिपुत्र घटने लगा और हर्ष के काल में तो वह ८०० वर्ष में (अर्थात इ. स. २०० की पूर्व से ५०० तक में) नष्ट प्रायः ही हो गया। इस समय दिल्ली एक छोटासा ग्राम था, पाण्डवों के काल में कुछ महत्व भोग कर फिर वह गिर गया। इ. स. की नवमीं शताब्दि में अनङ्गपालने फिर उसे महत्व दिया, और जब बारहवीं शताब्दि में पृथ्वीराज ने जयचन्द्र पर विजय लाभ की. तब उस (दिल्ली) का महत्व कन्नौज से भी बढ़ गया। मुसलमानों ने पृथ्वीराज को जीत दिल्ली ही अपनी राजधानी बनाई, तो तब से आज तक वह नगर उन्नति पर ही है

इसके अतिरिक्त ह्युएनत्सङ्ग ने गंगा के उस पार कई प्रदेश गिनाए है यथा परित्रय (अलवर) श्रुघ्न (कदाचित् हरिद्वार) मतिपुर और ब्रह्मपुर (गढ़वाल) अहिछत्र, पिलोशन, शंकप्य, अयोध्या, अल्हाबाद, और कौशाम्बी इत्यादि । इन सब पर हर्षका प्रभुत्व पूर्ण रूप से था ।

हिमालयकी तराई में श्रावस्ति, कपिलवस्तु, रामग्राम, कुशीनगर इत्यादि छोटे छोटे राज्यों के सरदार हर्ष का लोहा मानते थे।

इसके बाद ह्युएनत्सङ्ग मगध का वर्णन करता है । पूर्व काल में वहां पूर्णवर्मा नामक राजा राज्य करता था । कर्णसुवर्ण के शशाङ्कगुप्त ने वहां के बोधि वृक्ष को नष्ट कर दिया था, पूर्णवर्मा ने फिर स उसे स्थापित किया । मगध बौद्धधर्म का केंद्र स्थान था । इसी नगर में ही बोधिवृक्ष तथा बुद्धदेव के पादचिह्न वाला पत्थर था। बौद्धधर्म का प्रसिद्ध नालन्द मठ भी यहीं था मगध से परे हिरण्यपर्वत अथवा मौंघिर

चम्पा अथवा भागलपुर कज्जुगल अथवा राजमहाल तथा पौंड्रवर्धन अथवा रङ्गपुर इत्यादि थे। हमारे चीनी यात्री ने यहां के राजाओं के नाम नहीं दिये। इन राज्यों से लगा हुआ कामरूप वा आसाम का राज्य था। वहां के राजा भास्कर वर्मा अथवा कुमारराजा का उल्लेख पूर्व हो चुका है। इन सब पर हर्ष शासन करता था।

इस समय बङ्गाल में कर्णसुवर्ण, समतट और ताम्रलिप्ति (मिदनापुर) इत्यादि मुख्य नगर थे। कर्ण-सुवर्ण के शशाङ्कगुप्त उपनामधारी नरेन्द्रगुप्त ने राज-वर्धन का वध किया था, तथा वह बौद्धों को परास्त कर चुका था इस पर पूर्व ही विवेचन किया जा चुका है। इसके मरने के बाद इसका राज्य कुमारराजा को दे दिया गया। समतट अर्थात् पूर्व बङ्गाल में ब्राह्मण वंशी राजे राज्य करते थे। इस वंश के किसी एक बौद्ध संन्यासी से ह्युयेनत्सङ्ग की भेंट हुई थी। ताम्र-लिप्ति पर किसका अधिकार था यह पता नहीं लग सका परन्तु उपरोक्त तीनों नगरों पर हर्ष का प्रभुत्व था यह निर्विवाद है।

उत्तर भारत का विस्तार दक्षिण में ओद्र (ओ-रिस्सा) और कोगंडु (गंजम) तक है। यहां किसका राज्य था यह ह्युएनत्सङ्ग ने नहीं लिखा। अन्य साधनों से पता लगाना कठिन है; परन्तु कटक के जगन्नाथ के मन्दिर से प्राप्त ताड़पत्रों से ऐसा मालूम हुआ है कि इ० स० की सातवीं शताब्दी से बारहवीं शताब्दी तक वहां केसरी वंश के राजा राज्य करते थे। नैपाल का राज्य इस समय तिब्बत के आधीन था और यहां हर्ष का आधिपत्य था या नहीं यह सन्दिग्ध रह जाता है। दक्षिण में हर्ष के प्रतिस्पर्धी प्रवरसेन द्वितीय के आधीन कई राज रजवाड़े थे ऐसा ह्युयेन-त्सङ्ग लिखता है। इससे हमारा सम्बन्ध नहीं है। यहां उल्लेख योग्य यही बात है कि जिस प्रकार प्रवरसेन हर्ष के साथ ही सिंहासनारूढ हुआ था, उसी प्रकार हर्ष के समान उसकी सत्ता भी सातवीं सदी के बीच में घट गई थी कारण कि कांची के नरसिंहवर्मा ने उसकी राजधानी बादामी को छीन उसे नष्ट कर दिया।

भारतवर्ष से बाहर हर्ष का सम्बन्ध चीन से था यह बात पूर्व कही जा चुकी है। यदि एक सामान्य दृष्टिपात किया जाय तो हम कह सकते हैं कि नर्मदा के उत्तर में पूर्व से पश्चिम तक और उत्तर से दक्षिण तक लगभग सब ही स्थलों पर हर्ष की विजय पताका फहरा चुकी थी।

साहित्याकार राजा हर्ष कवि के रूप में

भारतवर्ष के राजे निरे विद्याप्रेमी ही नहीं थे किन्तु उन में से कई, कई विषयों के पण्डित माने जाते थे। चक्रवर्ती सम्राट हर्ष के सम्बन्ध में विस्तार पूर्वक लिखने के अनन्तर, अब हम साहित्य-प्रेमी हर्ष के विषय में लिखकर यह चरित्र पूर्ण करेंगे। हर्ष का साहित्य से पुष्कल प्रेम था इस के दरबार में अनेक साहित्य प्रेमी लेखक रहते थे जिन्हे धनादि से भी महाराज से सहायता मिलती थी। इन में 'कादम्बरी और हर्ष चरित्र' का लेखक बाण और 'सूर्यशतक' का लेखक 'मयूर' मुख्य थे। हर्ष स्वयं भी महाकवि की पदवी से विभूषित किया जाता है 'रत्नावली' '   ' तथा 'प्रियदर्शिका'

इन्ही के रचित नाटक बतलाये जाते हैं । कईयों को इस पर सन्देह है । इतिहास में कुल तीन हर्ष हुये हैं। एक हर्ष बारहवी शताब्दी में हुआ है, उसकी माताका नाम मामल्लदेवी तथा पिता का नाम हीर था । उसने 'नैषधीय चरित' नामी एक महाकाव्य की रचना की है। इसके अतिरिक्त वह अन्य आठ पुस्तकों का भी लेखक है। इसके लेखों में एक विशेषता यह है कि वह स्वरचित ग्रन्थों का नाम उनमें यत्र तत्र देही देता है, परन्तु उसके किसी भी लेख में ' रत्नावली ' नागानन्द और ' प्रियदर्शिका ' का नाम नही और अपने नैषधीय चरित में एक स्थल पर वह कहता है कि " ताम्बूलद्वय मासनं च लभते यः कान्यकुब्जेश्वरात् । "

इस पर से यह कहा जा सकता है कि वह कन्नौज के राजा के पास से कर लेता था परन्तु हमारा चरित्र नायक हर्ष अपने आपको अपने काव्यों में " पादपद्मोपजीवी राजसमूह ' कर के लिखता है अर्थात् स्वयं वह राजा था, इस लिये नागानन्द का राज कवि ' राजोपजीवी ' हर्ष नहीं हो सकता यह स्पष्ट ही है

दूसरा हर्ष इ० स० १११३ से ११२५ तक कास्मीर में राज्य करता था। यह हर्ष भी राजा था किन्तु धानिक के भाष्य के कई स्थलों पर से ऐसा पता चलता है कि वह उन तीन नाटकों का कर्त्ता नहीं, इस से यह सिद्ध हुआ कि हमारा चरित्रनायक हर्ष ही इन तीन नाटकों का रचयिता था। कई लोगों की ऐसी धारणा है कि श्रीहर्ष ने इन नाटकों को नहीं रचा किन्तु उसके दरबार के किसी कवि ने धन के बदले में यह नाटक लिखकर हर्ष का नाम लेखक रूप में रख दिया होगा। मम्मट के काव्य प्रकाश में एक स्थलपर लिखा है—

" श्रीहर्षादेर्धाविकादीनामिव धनम् " इस वाक्य पर से लोगों का ऐसा अनुमान होता है। दूसरे इसे सबल नहीं मानते। उनका कथन है कि ऐसा मानना कि धावकादि लेखकों को श्रीहर्ष के राजदरबार से धन की सहायता मिलती थी अतः उन्होंने यह नाटक लिख हर्ष के नाम से प्रसिद्ध कराये अनुचित है।

भासो रामिलसोमिलौ वररुचिः श्री साहसाङ्कः कवि–
र्मेण्ठो भारविकालिदासतरलाः स्कंदः सुबन्धुश्च यः ।
दंडी बाणदिवाकरौ गणपतिः कांतश्च रत्नाकरः
सिद्धा यस्य सरस्वती भगवती के तस्य सर्वेऽपि ते ॥

कारणं तु कवित्वस्य न संपन्नकुलीनता ।
धावकोऽपि हि यद्भासः कवीनामग्रिमोऽभवत ॥

आदौ भासेन रचिता नाटिका प्रियदर्शिका ।
निरीर्ष्यस्य रसज्ञस्य कस्य न प्रियदर्शना ॥

तस्य रत्नावली नूनं रत्नमालेव राजते ।
दशरूपककामिन्या वक्ष्यस्यत्यन्तशोभना ॥

नागानन्दं समालोक्य यस्य श्री हर्षविक्रमः ।
अमन्दानन्दभरितः स्वसभ्यमकरोत्कवीम् ॥

उपरोक्त श्लोकों पर से नारायण शास्त्री नामक एक लेखक का मत है कि ई० स० पूर्व ५५२ से ४५७ में कोई हर्ष विक्रमादित्य नाम का राजा हो गया है और भास उपनामधारी धावक उसका राजकवि हुआ है। यह ठीक है कि धावक का अर्थ धोबी होता है और यह भी सत्य है कि भास धोबी था परन्तु कालिदास ने अपने

'मालविकाग्निमित्र' नाटक में भास का उल्लेख किया है इस पर से यह सिद्ध ही है कि भास कालिदास से पूर्व हुआ होगा। इस लिये नारायण शास्त्रीने कल्हण की राजतरङ्गिणि में

तत्रानेहस्युज्जयिन्यां श्रीमान्हर्षापराभिधः।
एकच्छत्रश्चक्रवर्ती विक्रमादित्य इत्यभूत्॥

उक्त श्लोक पर से एक नया हर्ष ढूण्ड निकाला है। परन्तु जब तक 'कवि विमर्श' पुस्तक अप्रकाशित है तब तक इस बातका निर्णय करना असम्भव है।

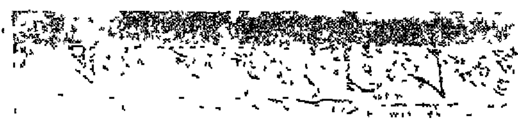
इन तीन नाटकों के उपरान्त हर्ष का नाम अप्रगट 'तापसवत्सराज' तथा चैत्यवंदन और सुप्रभात इत्यादि स्तोत्रों पर भी देखने में आता है; परन्तु उपरोक्त दोनों स्तोत्र उसके लिखे हुये नहीं है ऐसा रा. रा. केशवलाल हर्षदराय ध्रुव ने अपने लेखों में सिद्ध कर दिया है *। स्थल संकोच के कारण इस पर अधिक विवेचन नहीं किया जा सकता।

भास और हर्ष की शैली में समता है तो इस-पर से ऐसा कैसे कहा जा सकता है कि उक्त तीन

* 'नवजीवन अने सत्य' पुस्तक ४ अंक ४१५

नाटक भास ने ही लिखें हैं। ऐसे कवि कालिदास की शैली कहीं कहीं वाल्मीकी रामायण से मिलती है तो इस से क्या हुआ। बहुत कहें तो इतना कह सकते है कि हर्ष ने भास के ग्रन्थ पढ़े होगें और उनका प्रभाव उसकी रचनाओं पर पड़ा होगा। इन नाटकों का रचयिता श्रीहर्ष ही है यह बात निश्चित हो चुकी है। इस निर्णय का समर्थन चीनी यात्री इत्सिङ्ग के लेखों से होता है। वह लिखता है कि राजा शिलादित्यने बोधिसत्व जीमूतवाहन की कथा कवितारूप में लिखी थी। इस जीमूतवाहन को एक नाग के छुड़ाने के निमित्त स्वयं आधीनता स्वीकार करनी पड़ी थी। यह कविता गाई गई थी, और अनेक पुरूषों से उसने यह नाटक हावभाव नृत्य इत्यादि के साथ अभिनय करवाया था, और इस प्रकार उसी समयही इसको प्रजा प्रिय बना दिया था। इन सब बातों पर से ऐसा कहा जा सकता है उपरोक्त तीनों नाटक श्रीहर्ष ने स्वयं ही—या अपने राज कवियों की सहज सहायता से—रचे थे। उसमें कवित्व शक्ति नहीं थी ऐसा मानने का कोई कारण नहीं

श्री हर्ष के हस्ताक्षर निम्न प्रकार के हैं



' स्वहस्तो मम महाराजाधिराज श्रीहर्षस्य, '

आर्य्या वर्त के राजे लेखक रहे हैं एसे अनेक दृष्ट

हर्ष की शैली और कवियोंमें उसका स्थान

दृष्टिगोचर होते हैं; और सा॰ में इस प्रकार का योग बन्द नहीं हुआ, यह अ॰धु॰ इतिहास भी बतलाता है। हर्ष की शैली प्र॰ सुगम तथा सरल है। कहीं कहीं कठिनता भी झ॰ पड़ती है। कालिदास इत्यादियों के समान उ॰ शैली में मनोहरता नहीं किंतु फिर भी अन्य क॰ से किसी प्रकार उतरती नहीं है। यदि उसकी शै॰ के अत्युक्ति व्यङ्ग, द्वि अर्थ आदि दोष जो कहीं क॰ आ गये है निकाल दिये जांय तो उसका ढङ्ग लो॰ प्रिय तथा अनुकरणीय है। संस्कृत विद्वानों में द्वितीय श्रेणि के पण्डितों में स्थान दिया जा स॰ है अपने तीनों नाटकों में हर्ष अपने आपको '

पुण कवि ' कहता है। ' प्रसन्न राघव ' का कर्त्ता जयदेव उसे ' हर्षोहर्षः ' (अर्थात् सरस्वती को आनन्द देने वाला) कहता है। इतना कहना तो अत्युक्ति जान पड़ती है। प्रथम वर्ग के कवियों यथा कालिदास, भवभूति इत्यादि से उतरता हुआ किंतु विशाख दत्त, भट्ट, नारायण इत्यादि से वह बढ़ कर ही है।

तब कहिए कि शरीर शक्ति बुद्धि शक्ति से सम्पन्न राजाओं के काल में भारत की प्रगति कितनी होगी ?

परिशिष्ट पहिला

मधुवन का ताम्रपत्र

इ. स. १८८८ के जेन्युअरी के महीने में वायव्य प्रान्तों के आज़मगढ़ के इशान कोन में सोलह कोसकी दूरी पर स्थित सगरी तहसील के नथुपुर परगने के मधुवन गांव में एक किसान का हल इस ताम्रपत्र से लगा, तब इसे बाहर निकाला गया। यह चीस तसु (गिरह) लम्बा और तेरह तसु (गिरह) चौड़ा है,

और ८ तोला है। इस ताम्रपत्र की तिथि हर्ष संवत २५ की माघसर छट्ठ है। हर्ष संवत इ० स० ६०६ से आरंभ होता है अर्थात् इस पत्र की तारीख इ० स० ६०६ के नवेम्बर वा डिसेंबर में आयेगी ताम्र-पत्रका लेख इस प्रकार है।

१ ओम् स्वस्ति महानौहस्त्यश्वजयस्कन्धावारान् कपिस्थिकायाः महाराजश्री नरवर्द्धनस्तस्य पुत्रस्तत्पादानुध्यातः श्रीवज्रिणीदेव्यामुत्पन्नः परमादित्यभक्तो—

२ महाराजश्रीराज्यवर्द्धनस्तस्य पुत्रस्तत्पादनुध्यात श्रीअप्स-रोदेव्यामुत्पन्नः परमादित्यभक्तो महाराजश्रीसदादित्यवर्ध-नस्तस्य पुत्रस्तत्पादानुध्यातः श्रीमहा-

३ सेनगुप्तादेव्यामुत्पन्नश्चतुःसमुद्रातिक्रान्तकीर्तिः प्रतापानुरा-गोपनतान्यराजो वर्णाश्रमव्यवस्थापनप्रवृत्तचक्र एकचक्ररथ इव प्रजानामार्तिहरः

४ परमादित्यभक्तः परमभट्टारकमहाराजाधिराजश्रीप्रभाकरव-र्द्धनस्तस्य पुत्रस्तत्पादानुध्यातः सितयशःप्रतानविच्छुरितस-कलभुवनमण्डलपरिगृहीत—

५ धनदवरुणेन्द्रप्रभृतिलोकपालतेजा. सत्पथोपार्जितानेकद्रविण-भूमिप्रदानसम्प्रीणितार्थिहृदयोतिशायितपूर्वराजचरितो देव्या-

६ श्री यशोमत्यामुत्पन्न परमसौगतः सुगत इव परहितैकरतः परमभट्टारकमहाराजाधिराजश्रीराज्यवर्द्धनः राजानो युधि दुष्टवाजिन इव श्रीदेवगुप्तादयः

७ कृत्वा येन कशाप्रहारविमुखाः सर्वे समं संयताः [।] उत्खाय द्विषतो विजित्य वसुधां कृत्वा प्रजानां प्रियं प्राणानुज्झितवानरातिभवने सत्यानुरोधेन यः [॥] तस्यानुज-

८ स्तत्पादानुध्यातः परममाहेश्वरो महेश्वर इव सर्वसत्त्वानुकम्पी परमभट्टारकमहाराजाधिराजश्रीहर्षः श्रावस्तीभुक्तौ कुण्डधानी वैषयिकसोमकुण्डकाग्रामे

९ समुपगतान् महासामन्तमहाराजदौस्साधसाधनिकप्रमातार राजस्थानीयकुमारामात्योपरिकविषयपतिभटचाटसेवकादान्प्र-तिवासिजानपदांश्च समा-

१० ज्ञापयत्यस्तु वः संविदितमयं सोमकुण्डकाग्रामो ब्राह्मणवा-मरथ्येन कूटशासनेन भुक्तक इति विचार्य यतस्तच्छासनं भुङ्क्त्वा तस्माद्दाक्षिप्य च स्वसीमा-

११ पर्यन्तः सोद्रङ्ग. सर्वराजकुलाभाव्यप्रत्यायसमेताः सर्वपरि-हृतपरिहारो विषयादुद्धृतपिण्डः पुत्रपौत्रानुग. चन्द्रार्कक्षि-

१३ ज्येष्ठभ्रातृपरमभट्टारकमहाराजाधिराजश्रीराज्यवर्द्धनदेवपा-
दानां च पुण्ययशोभिवृद्धये सावर्णिसगोत्रच्छन्दोगसब्रह्मचा-
रिभट्टवातस्वामि–

१४ विष्णुवृद्धसगोत्रबह्वृचसब्रह्मचारिशिवदेवस्वामिभ्या प्रतिग्र
हधर्मणाग्रहारत्वेन प्रतिपादित: विदित्या भवद्भिः समनुम-
न्तव्य. प्राति–

१५ वासिजनपदैरप्याज्ञाश्रवणविधेयैर्भूत्वा यथासमुचिततुल्यमय-
भागभोगकरहिरण्यादिप्रत्याय अनयोरेवोपनेया सेवोपस्थानं
च करणीयमित्यपिच '।

१६ अस्मत्कुलक्रममुदाहरद्भिरन्यैश्च दानमिदमभ्यनुमोदनीयं [।]
लक्ष्म्यास्तडित्सलिलबुद्बुदचञ्चलाया. दान फलं परयशः
परिपालनं च ॥

१७ कर्मणा मनसा वाचा कर्तव्यं प्राणिने हितम् [।]
हर्षेणैतत्समाख्यातं धर्मार्जनमनुत्तमम् ॥

दूतकोऽत्र महाप्रमातारमहासामन्तश्रीस्कन्द गुप्तः महाक्षप-
टलाधिकरणाधि—

१८ कृतसामन्तमहाराजेश्वरगुप्तसमादेशाच्चोत्कीर्णं गुर्जरेण सम्वत्
२० + ५ मार्गशीर्ष वदि ६.

परिशिष्ट दूसरा.

बंसखेर का ताम्रपत्र.

शाहजहांपुर से लगभग बारह कोस पर यह ताम्र पत्र बंसखेर गांव में से १८९४ के सप्टेम्बर महीने में मिला था। यह १९ तसु (गिरह) लम्बा और १३ गिरह चौड़ा है। उसकी तिथि हर्ष संवत् २२ कि कार्तिक वद एक है। हर्ष संवत् ६०६ में आरम्भ होता है अर्थात् इस पत्र की तारीख इ० सं० ६२८ के अक्टोबर और नवेम्बर में पड़ती है। ताम्रपत्र में निम्न लिखा है।

१ श्री स्वस्ति महानौ हस्त्यश्वजयस्कन्धावाराच्छ्रीवर्धमानकोट्या महाराजश्रीनरवर्धनस्तस्य पुत्रस्तत्पादानुध्यातश्रीवज्रिणीदेव्यामुत्पन्नपरमादित्यभक्तो महाराजश्रीराज्यवर्धनस्तस्य पुत्रस्तत्पदानु—

२ ध्यातश्रीमदप्सरोदेव्यामुत्पन्न परमादित्यभक्तो महाराजश्रीमदादित्यवर्धनस्तस्य पुत्रस्तत्पादानुध्यातश्रीमहासे[न] गुप्तादेव्यामुत्पन्नश्चतुस्समुद्रातिकान्तकीर्तिप्रतापानुरागोप—

३ नतान्यराजो वर्णाश्रमव्यवस्थापनप्रवृत्तचक्र एकचक्रस्थ इव प्रजानामार्तिहरपरमादित्यभक्त परमभट्टारकमहाराजाधिरा—

जश्रीप्र[भा कर व र्ध न]स्तस्यपुत्रस्तत्पा[दा]

४ नुध्यातस्मितयशप्रतानविच्छुरितसकलभुवनमण्डलपरिगृही-तधनदावरुणेन्द्रप्रभृतिलोकपालतेजास्सत्पथोपार्जितानेकद्रविणभूमिप्रदा[नमं]प्रीणितार्थिहृदयो --

५ तिशयितपूर्वराजचरितो देव्याममलयशोमत्यां श्रीयशोमत्या-मुत्पन्नपरमसौगतस्सुगत इव परहितैकरत परमभट्टारकमहा-राजाधिराजश्रीराज्यवर्धन.। राजानो युधि दु —

६ ष्टवाजिन इव श्रीदेवगुप्तादयः कृत्वा येन कशाप्रहारा विमुखा-स्सर्वे समं संयताः। उत्खाय द्विषतो विजित्य वसुधां कृत्वा प्रजानां प्रियं प्राणानुज्झितवानरातिभवने सत्यानुरोधेन यः। तस्या—

७ [नुजस्त] त्पादानुध्यात परममाहेश्वरो महेश्वर इव सर्व-सत्वानुकम्पी परमभट्टारकमहाराजाधिराजश्रीहर्ष अहिच्छ-त्राभुक्तावङ्गदीयवैषयिकपश्चिमपत्थकस [म्बद्ध] मर्कटसा

८ गरे [स] मुपगतान्महासामन्तमहाराजदौस्साधसाधनिक-प्रमातारराजस्थानीयकुमरामात्योपरिकविषयपतिभटचाटसेव-कादीन्प्रतिवासिजानपदांश्च समाज्ञायाति [विदित] म -

९ [स्तु] यथायमुपरिलिखितग्रामस्स्वसीमापर्यन्तस्सोद्रङ्गस्स-र्वराजकुलाभाव्यप्रत्यायसमेतस्सर्वपरिहृतपरिहारो विषया [दु] द्धृतपिण्डपुत्रपौत्रानुगश्चन्द्रार्कक्षितिसमका—

१० [ली] नो भूमिच्छिद्रन्यायेन मया पितु परमभट्टारकमहा-राजाधिराजश्रीप्रभाकरवर्धनदेवस्य मातुर्भट्टारिकामहादेवी राज्ञीश्रीयशोमतीदेव्या ७

१ महाराजाधिराजश्रीराज्यवर्धनदेवपादानाञ्च पुण्ययशोभिवृ-
द्धये भरद्वाजसगोत्रबह्वृचच्छन्दोगसब्रह्मचारिभट्टबालचन्द्र-
भद्रस्वामिभ्यां प्रतिग्रहधर्मणाग्रहारत्वेन प्रतिपा—
२ दितो विदित्वा भवद्भिस्समनुमन्तव्य प्रतिवासीजानपदैर-
प्याज्ञाश्रवणविधेयैर्भूत्वा यथा समुचिततुल्यमेयभागभोगकर-
हिरण्यादिप्रत्याया एतयोरेवोपनेमास्सेवोपस्थान [ञ्च] क—
३ रणीयमित्यपि च । अस्मत्कुलक्रमुदामुदाहरद्भिरन्यैश्च
दानमिदमभ्यनुमोदनीयं।लक्ष्म्यास्तडित्सलिलबुद्बुदचञ्चलाया
दानं फलं परयशःपरिपालनञ्च । कर्मणा म—
४ नसा वाचा कर्तव्यं प्राणिभिर्हितं । हर्षेणैतत्समाख्यातन्ध-
र्मार्जनमनुत्तमं [।] दूतकोत्र महाप्रमातारमहासामन्तश्रीस्क-
न्दगुप्तः महाक्षपटलाधिकरणाधिकृतमहासामन्तम—
५ हाराज[भान] समादेशादुत्कीर्णं
६ ईश्वरेणेदमिति सम्वत् २० २
७ कार्ति वदि १ [॥]
८ स्वहस्तो मम महाराजाधिराजश्रीहर्षस्य [॥]

समाप्त.

श्री सयाजी बालज्ञानमाला.

प्रकाशित गुजराती पुस्तकें.

१	गिरनारनुं गौरव (सचित्र)	०—६—
२	ऋतुना रंग	०—६—
३	शरीरनो सचो (सचित्र)	०—६—
४	महाराणा प्रताप (सचित्र)	०—६—
५	कोषनी कथा (सचित्र)	०—६—
६	पाटण सिद्धपुरनो प्रवास	०—६—
७	पावागढ	०—६—०
८	औरंगजेब (सचित्र)	०—६—
९	मधपुडो (सचित्र)	०—६—
१०	रणजितसिंह ”	०—६—
११	श्री हर्ष	०—६—
१२	सूर्यकिरण (सचित्र)	०—६—
१३	वातावरण	०—६—
१४	ग्रहण (सचित्र)	०—६—
१५	बाल नेपोलिअन	०—६—
१६	कोषकी कथा हिन्दी (सचित्र)	०—८—
१८	लोहीनी लीला	०—६—
१९	श्री हर्ष हिन्दी भाषामें	०—८—